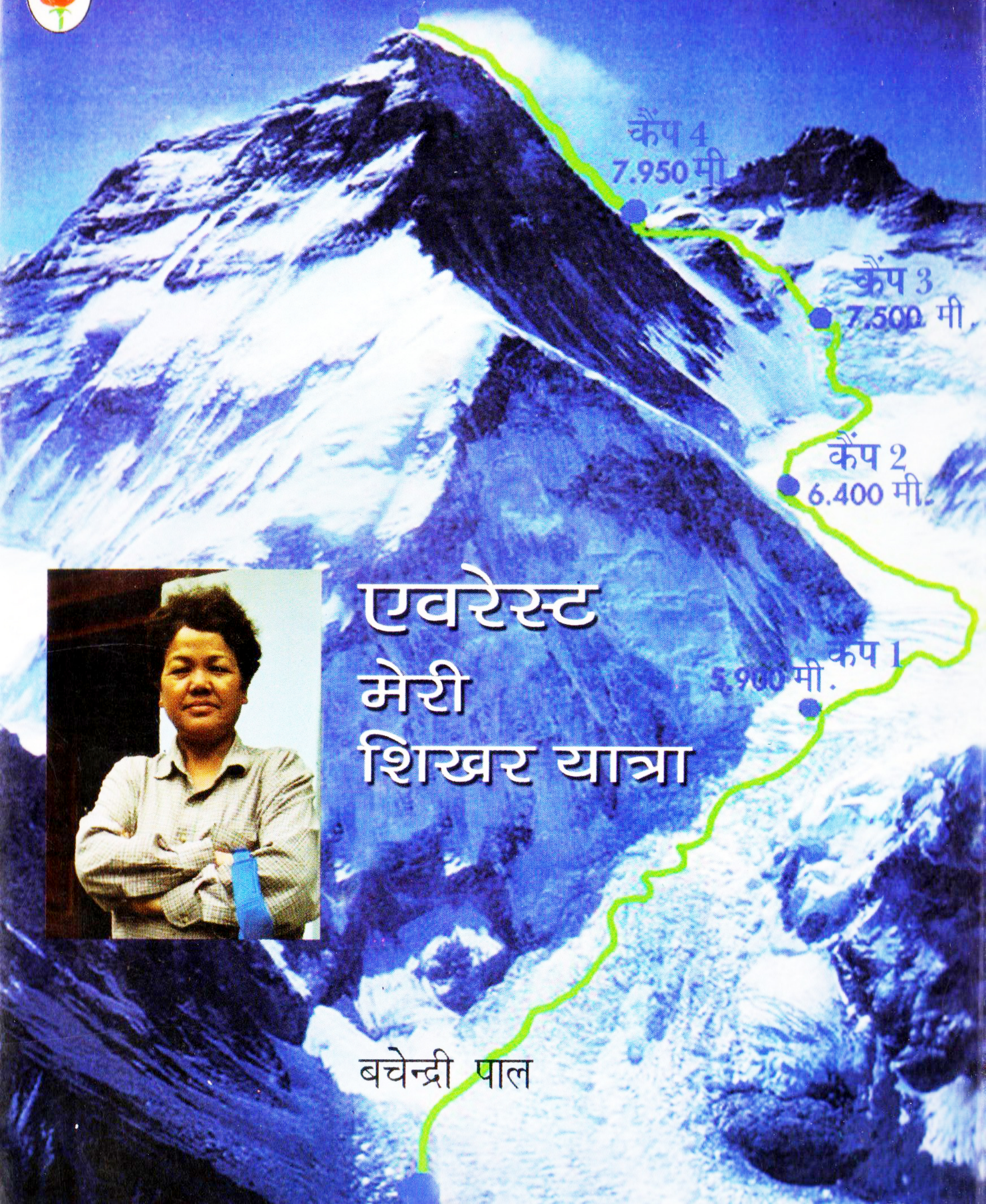
एवरेस्ट मेरी शिखर यात्रा



बचेन्द्री पाल

ISBN 978-81-237-0929-1
पहला संस्करण : 1990
पंद्रहवीं आवृत्ति : 2011 *(शक 1932)*

छाया चित्र : ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह एवं पृष्ठ 31 के चित्र संजीव सेठ के सौजन्य से।
Everest, My Journey to the Top *(English)*
Everest Meri Shikhar Yatra *(Hindi)*
₹ **18.00**
निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070 द्वारा प्रकाशित

नेहरू बाल पुस्तकालय

एवरेस्ट
मेरी शिखर यात्रा

लेखक
बचेन्द्री पाल

सहयोग
ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह

अनुवाद
बी०एन० गोयल



नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया



परिवार-वंशावली

मेरे पिता का नाम किशन सिंह पाल है। उनका जन्म एक छोटे से पहाड़ी गांव बम्पा में 1901 में हुआ था। यह गांव सीमावर्ती जिले चमोली का एक भाग है। कलकल करती और उछलती कूदती धोली गंगा नदी के दोनों और बसा है। मेरे पिता का कद नाटा और गठीला है। अपने इलाके के अधिकांश व्यक्तियों तथा अपने पिता की तरह मेरे पिता एक छोटे सीमावर्ती व्यापारी थे। हमारे क्षेत्र में सड़कें नहीं थीं, इसलिए वो अपना सामान ले जाने के लिए खच्चरों, घोड़ों और यहां तक कि बकरियों का भी इस्तेमाल करते थे। वे भारत से तिब्बत आटा, चावल, जौ और मिसरी ले जाते थे। तिब्बत में या तो वे इन चीजों को बेचते थे अथवा इनके बदले में ऊन, खनिज लवण विशेषकर काला नमक, बकरियां और भेड़े लाते थे।

मेरे पिता व्यापार में अधिक सफल नहीं रहे। उन्होंने 35 साल की आयु में नया काम करने का निश्चय किया। उन्होंने बम्पा गांव को छोड़कर नकुरी गांव में अपना नया घर बसाया। यह पंद्रह घरों का छोटा सा गांव था जो उत्तरकाशी से 12 किलोमीटर दक्षिण में भागीरथी गंगा के दायें किनारे पर बसा हुआ था। किशन सिंह ने हंसा देई नेगी नाम की लड़की से शादी की थी। अट्ठारह वर्षीय हंसा अपने पति से आयु में आधी थी। यद्यपि बहुत से मामलों में वे एक दूसरे से अलग थे, फिर भी उनमें काफी अच्छी निभती थी। ठिगने और मजबूत काठी के किशन सिंह मिज़ाज के सख्ते और गर्म थे। जबकि हंसा देई कोमलांगी, नाजुक और अन्य गढ़वाली लड़कियों की अपेक्षा लम्बी थी। वह कांतियुक्त

← मेरे माता-पिता काम करते हुए

और दिल की बहुत कोमल थी। मेरे माता-पिता ने सुखी परिवार का निर्माण किया था। उनके क्रमशः पांच बच्चे थे—लड़की, लड़का, लड़की, लड़की, लड़का इसी क्रम में मेरा नम्बर तीसरा था।

इस क्षेत्र के सभी सीमावर्ती ग्रामीणों की तरह हमारे भी दो घर थे, एक नकुरी गांव में दूसरा हरसिल में। सर्दियों में जब हरसिल बर्फ से ढक जाता था। तब हम नकुरी में रहते थे। गर्मियों के छह महीनों में हम पच्चीस सौ मीटर से अधिक ऊँचाई पर बसे हरसिल में चले जाते थे जहां ऊंची ढलानों पर बकरियों, भेड़ों और अन्य जानवरों के लिए अच्छा चारा मिलता था। पूर्वी गढ़वाल के अन्य परिवारों के साथ ही हम हरसिल घाटी के छोटे से गांव में रहते थे। लेकिन हमारा गांव 1943 की बाढ़ में बिल्कुल बह गया और इसलिए गर्मियों के मौसम में हम बेघर हो गए।

मेरे पिता और अन्य व्यक्तियों ने, जो विस्थापित हो गए थे, घाटी में ज़मीन खरीदकर नए मकान बनाने की कोशिश की, लेकिन वहां के स्थानीय निवासियों ने इतनी बाधाए डाली कि हमें गर्मियों में किराये का मकान लेकर रहना पड़ा। हमें बहुत मुसीबतों का सामान करना पड़ा लेकिन मेरे पिता ने न तो किसी को रिश्वत दी और न किसी का एहसान किया। अंततः हमने पूरे वर्ष नकुरी गांव में ही रहने का निश्चय कर लिया।

मेरे पिता ने पशुपालन व कच्ची ऊन का व्यापार बंद कर दिया और परिवार ने तैयार माल, बुने हुए कालीन और गढ़वाली औरतों द्वारा पहने जाने वाले कमरबंद तथा बुने हुए स्वेटरों का व्यवसाय शुरू कर दिया। पिता ने कुछ दूरी पर छोटा सा ज़मीन का हिस्सा खरीद लिया और खाद्य फसलों को उगाने का काम किया। इतनी अधिक मेहनत करने के बावजूद परिवार की आवश्यकताओं के लिए यह सब पूरा नहीं पड़ता था।

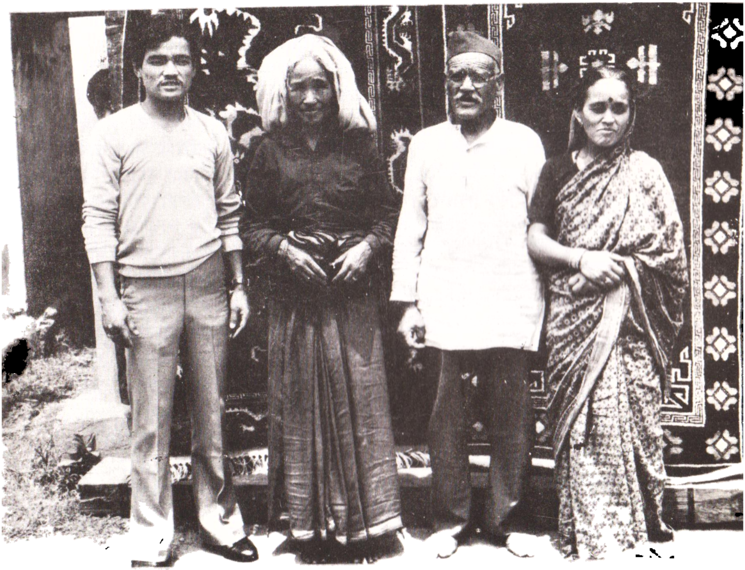
मेरी मां चर्खा कातते हुए →



1945 में संतान, एक लड़की का जन्म हुआ जिसका नाम कामलेश्वरी रखा गया। जब वह बहुत छोटी थी तभी उसे स्कूल भेज दिया गया। लेकिन उसे छठी कक्षा के बाद स्कूल छोड़ना पड़ा। परिवार उसकी आगे की पढ़ाई का खर्च नहीं उठा सका। कमला को घर पर और बाहर अपने हिस्से का काम भी करना पड़ता था। वह जंगल से चारा और ईंधन की लकड़ी और घर के लिए पानी ढोकर लाती थी। गढ़वाल में लड़की होने का क्या अर्थ है, यह मैं जानती हूं। यह सब मेहनत के काम मैंने स्वयं किये हैं लेकिन उतने अधिक नहीं जितने कमला दीदी ने किये। हमने कालीन बुनना सीखा था। मेरी बहन बहुत अच्छी बुनाई करती थे। मेरा हाथ भी उतना खराब नहीं था, लेकिन मेरे अंदर एक तरह की बेचैनी थी और मुझे घरेलू काम पसंद नहीं था।

कमलेश्वरी के छः वर्ष बाद हमारे परिवार में अगला आने वाला बच्चा बचंन सिंह था। यह मेरा भाई पढ़ाई लिखाई में काफी अच्छा था लेकिन उसकी वास्तविक रुचि पहाड़ों और दुर्गम रास्तों के चढ़ने में थी। वह एक बहुत अच्छा खिलाड़ी भी था। स्नातक परीक्षा पास करने के बाद वह सीमा सुरक्षा बल में इंस्पेक्टर के पद पर भरती हो गया। उसने अपने अधिकारियों को अपनी कार्य कुशलता से उत्तरकाशी में स्थित नेहरू पर्वतारोहण संस्थान में पर्वतारोहण में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए भेजने को विवश कर दिया। उसने वहां पर अच्छे अंकों से पर्वतारोहण के प्रारंभिक और उच्च श्रेणी कोर्स पूरे किये।

मेरे माता-पिता (बीच में), छोटा भाई और बड़ी बहन →



मेरा जन्म 24 मई 1954 को हुआ था। मेरे माता-पिता के अनुसार सभी बच्चों में मैं सबसे अधिक शोर मचाने वाली थी। मैं सबसे अधिक और सबसे ऊंची आवाज में रोया करती थी। मैं अपने माता-पिता को बहुत परेशान करती थी। मेरे पैदा होने के बाद से मेरे परिवार में कभी नीरसता नहीं आई।

मेरे जन्म के तीन साल बाद आने वाली अगली बच्ची उपमा थी। उसने नवीं कक्षा तक पढ़ाई की। मैं अपनी छोटी बहन को छेड़ती बहुत थी। लेकिन उपमा और मैं दोनों बहुत अच्छी दोस्त थीं। मेरी बड़ी बहन की तरह उपमा भी एक ठेठ पहाड़ी लड़की थी—सद्व्यवहार वाली, सीधी सादी तथा घरेलू किस्म की। मैं ही अकेली अक्खड़ थी।

परिवार का सबसे छोटा बच्चा राजेन्द्र सिंह उपमा के तीन साल बाह हुआ था। राजू मज़बूत किस्म का अच्छा खिलाड़ी था। मेरा बड़ा भाई हमेशा राजू से पर्वतारोहण जैसे बाहरी कामों में भाग लेने के लिए कहता रहता था। मुझे इस बात का क्रोध आता था। ''राजू ही क्यों? मैं भी क्यों नहीं पर्वतारोहण का कोर्स कर सकती?'' मैं अक्सर पूछती मैं जितनी अधिक अपने भाइयों से प्यार करती थी, मैं इस बात से नाराज भी होती कि लड़कों को हम लड़कियों की अपेक्षा अधिक अवसर और लाड़ प्यार दिया जाता था। मैंने निश्चय कर लिया था कि मैं पाल परिवार में किसी से पीछे नहीं रहूंगी और न केवल वह करूंगी जो लड़के करते थे, वरन् उनसे अच्छा करके दिखाऊंगी।

परिवार में पिता ही सर्वेसर्वा थे। मैं इस बात को बचपन से ही जानती थी। मैं बहुत बातूनी और शरारती थी। मेरी शरारतें मेरे सख्त मिज़ाज के पिता को आनंदित करती थीं। मैं यह सोचती थी कि मैं पिता की दृष्टि में कुछ भी गलत नहीं कर पा रही हूं। यद्यपि कभी-कभी मैं सीमा पार कर जाती थी।

एक दिन मेरे पिता रामायण का पाठ कर रहे थे। मैंने उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के बहुत प्रयास किए, लेकिन उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया। अपेक्षित रहने की आदत न होने के कारण मैंने अपनी बातों और करतूतों से उनको तंग करना जारी रखा। उन्होंने मुझे एक दो बार धमकाया भी लेकिन मुझ पर कोई असर नहीं पड़ा। अंत में पिता का गुस्सा अपनी सीमा पार कर गया। मुझे उन्होंने उठाया, चबूतरे के पार ले गए और ढलान से मुझे ढकेल दिया। मैं सीधी नीचे गिरने वाली थी कि सौभाग्यवश मेरे हाथ में झाड़ियों की एक मोटी मजबूत शाखा आ गई और मैंने अपनी जान बचाने के लिए उसको कसकर पकड़ लिया। मैं इतनी भयभीत हो गयी थी कि मेरे लिए सांस लेना मुश्किल हो गया। मेरा चेहरा नीला पड़ गया था।

परिवार में एक दम हुल्लड़ मच गया। सामान्यतः शांत रहने वाली मेरी मां, मेरे पिता के ऊपर एक गुस्सैल शेरनी की तरह दहाड़ उठी और गुस्से में उनको न जाने क्या क्या कहा। पिता मुझे बचाने के लिए दौड़े, उन्होंने मुझे ऊपर खींचा और अपनी छाती से लगा लिया। यद्यपि मैं अब सुरक्षित थी लेकिन मैंने दिल दहलाने वाली चिल्लाहट से रोना शुरू कर दिया। पिता पहले से ही पश्चाताप से भरे हुए थे। मेरे इस हृदयविदारक रोने ने

उनको और अधिक विचलित कर दिया। अब मुझे सभी लोगों ने प्यार से दुलराया। मैं इस मन अंदर ही अंदर अत्यधिक आनंदित होती रही और मुझे एक प्रकार की आत्मिक संतुष्टि मिली।

अपनी बहनों के स्वाभाव के विपरीत, जो केवल आवश्यकता के समय ही घर से बाहर जाती थीं, मुझे जंगलों और पहाड़ों में दूर-दूर तक घूमना और जाना अच्छा लगता था। जब मेरे पिता घर से बाहर जाते मैं उनके साथ जाने की जिद्द करती और यदि वे मुझे अपने साथ ले जाने से मना करते तब मैं उन पर बहुत झल्लाती।

एक दिन, जब मैं चार वर्ष की थी, मेरे पिता मुझे जंगल में लगभग दो किलो मीटर दूर खेतों में घूमा कर लाए। दूसरे दिन मेरे माता-पिता अकेले चले गए। यद्यपि मैंने उनसे मुझे साथ ले जाने की जिद्द की और मैं बहुत जोर-जोर से रोई थी। लेकिन वे बिल्कुल भी नहीं पसीजे। मेरे भाई को मेरा ध्यान रखने के लिए कहा गया। कुछ देर बाद मुझे नींद आ गई और मेरा भाई खेलने के लिए बाहर चला गया जब मैं सो कर उठी मैं सीधी उन्हीं खेतों की ओर चल दी जहां हम पहले दिन गए थे। मैंने अनेक छोटे-छोटे पानी के नालों को पार किया और मैं अपने माता-पिता को खोजने की उम्मीद में चलती ही गई। जब मैं चलते चलते बिल्कुल थक गई और मेरे पांव जवाब दे गए तब मैं उनके इंतजार में बैठ गई। कुछ देर बाद मैं वहीं लेटकर सो गयी।

जब मेरे माता-पिता शाम को लौटे तो घर में तहलका मचा हुआ था। मैं काफी देर से खोई हुई थी और कोई नहीं जानता था कि मुझे कहां ढूंढ़ा जाए। उन सबको डर था कि मैं बाहर जाकर किसी नदी नाले में बह गई हूंगी। मेरे भाई बेचारे बचन को अच्छी खासी डांट फटकार पड़ी। अपनी अंतरात्मा से प्रेरित होकर मेरे पिता मुझे उसी पहले दिन वाले रास्ते पर खोजने निकले और बारिश से भीगे रास्ते पर उन्होंने मेरे पैरों के निशान देखे। वे उसी रास्ते पर चलते गए और घर से लगभग दो किलोमीटर दूर उन्होंने मुझे गहरी नींद में सोते हुए पाया। इसके बजाय कि मेरे माता-पिता मुझ पर नाराज होते मैं उल्टे उन पर नाराज हुई। वे केवल दिल खोल कर हँस दिए।

मैं जब किशोरावस्था में थी, मेरा बड़ा भाई बचन मेरा आदर्श था। वह मजबूत और आत्मविश्वासी था। जब हम घूमने जाते थे या पहाड़ों पर चढ़ते थे, तब मैं उसका साथ नहीं दे पाती थी, इसलिए वह मुझे अपने साथ ले जाने में कतराता था। एक दिन उसे जानवरों के लिए चारा लाने के लिए पहाड़ी पर जाना पड़ा। वह मुझे घर में छोड़ गया।

लेकिन मैंने चुपके से उसका पीछा किया।

बचन लकड़ी काटने में व्यस्त था और जैसे ही मैं वहां पहुंची, वह मुझे देख नहीं सका। उसने कुल्हाड़ी वाला हाथ भरपूर वार के लिए उठा लिया था कि तभी उसने अचानक मुझे देखा। उसने अपने हाथ को रोकने की कोशिश की लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। उसकी कुल्हाड़ी की नोक मेरी खोपड़ी में लग चुकी थी।

मेरे सिर से रक्त की तेज धार बह निकली। मुझे बहुत दर्द था लेकिन मैं रोई नहीं। वास्तव में मुझे अपने भाई के लिए बहुत अफसोस हुआ। वह बहुत अधिक चिंतित और डरा हुआ दिख रहा था। उसने पेड़ों की पत्तियों से खून को पोंछने की कोशिश की। जब खून का बहना नहीं रुका, उसने जड़ी बूटी वाले कुछ पौधों को उखाड़ा और घाव पर उनको लगाया। इससे खून का बहना रुक गया और फिर मेरे भाई बचन ने पानी के चश्में से मेरा चेहरा धोकर खून के धब्बे साफ किए।

घर पहुंचने से पहले मुझसे वायदा किया कि मैं किसी को इस चोट के बारे में नहीं बताऊंगी। उसने मुझसे कुछ दिनों तक नहाने के लिए भी मना कर दिया।

मैंने अपना वायदा निभाया लेकिन कुछ दिनों बाद मेरी माँ ने ध्यान दिया कि मैं नहाने से बच रही हूँ। उसने मुझे पकड़ा और खींच कर नदी तक ले गई। मेरा सिर धोते समय उसने बालों का गुच्छा देखा और जब उसने उसे साफ किया तो घाव से फिर खून बहना शुरू हो गया। एकदम डरी हुई मेरी माँ ने यह जानने की भरपूर कोशिश की कि मुझे चोट कैसे लगी है। लेकिन मैं अपने भाई को बचाने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ थी। मैंने चुप्पी साध ली। अंत में मेरे भाई ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। उसने माँ को बताया कि किस प्रकार उसने अचानक मुझे चोट पहुंचायी थी। हर आदमी मेरे इस आत्मनियंत्रण पर बहुत अधिक अचंभित था।

मैं एक बहुत बड़ी स्वप्नदृष्टा थी। मैंने कभी नहीं सोचा था कि कोई चीज मेरी पहुंच के बाहर है। यदि किसी पत्रिका या अखबार में प्रधान मंत्री का नवयुवकों के साथ कोई चित्र छपता था तो मैं कहा करती थी, "मैं इंदिरा गांधी से मिलूंगी।" जब कोई कार हमारे घर के नीचे की सड़क से गुज़रती, मैं कहती थी, "जब मैं बड़ी हो जाऊंगी तो मैं भी कार खरीदूंगी।" लेकिन हवाई जहाज मुझे सबसे अधिक आकर्षित करता था। जब भी मैं किसी हवाई जहाज या हैलीकॉप्टर को देखती, मैं उत्साहपूर्वक कहा करती थी, "एक दिन मैं भी हवाई जहाज में उड़ान भरूंगी।"

मेरा परिवार बहुत गरीब था और न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करने में भी असमर्थ था। मेरे माता पिता इस बात से दुखी थे कि उनके बच्चे ऐसे सपनों की दुनिया में रहते थे जो कभी भी साकार नहीं हो सकते लेकिन परिवार के छोटे सदस्य मेरी कल्पनाओं में बहुत अधिक आनंद लेते थे। और मुझे प्रेरित करते रहते थे। परन्तु मुझे अधिक प्रोत्साहन की जरूरत नहीं थी। मैं कारों, हवाई जहाजों और बड़े-बड़े लोगों से मिलने के बारे में बात किया करती थी। जब मेरे भाई बहने मेरी बातों पर हँसते थे तो खड़ी होकर मैं ऊँची आवाज़ में चिल्लाया करती थी।

''इंतज़ार करो मैं तुम्हें सब कुछ दिखा दूंगी।''



मेरा अध्ययन कक्ष

स्कूल के दिन

जब मैं केवल पाँच साल की थी, मैंने "डून्डा हरसिल जूनियर हाई स्कूल" में प्रवेश लिया। जैसा कि सकूल के नाम से स्पष्ट था, यह डून्डा और हरसिल दोनों स्थानों पर चलता था। सर्दियों में हरसिल जब बिल्कुल बर्फ से ढक जाता, तब स्कूल मेरे गाँव नकुरी से पाँच किलोमीटर दूर डून्डा गाँव में चला जाता था। गर्मी आने पर गाँव के नीचे के भाग के लोग अधिकांशतः स्कूल समेत, पूरी तरह से हरसिल में स्थानांतरित हो जाते थे। मुझे हर छठे महीने इस लंबे रास्ते से आने जाने में अत्यधिक आनंद आता था। हम भोड़ों और बकरियों के नन्हें-नन्हें बच्चों को हिलाते और दुलारते हुए, अपने सभी पशुओं को एक समूह में इकट्ठा कर रास्ते में रसभरी और फूलों को तोड़ते और खाते हुए चलते तथा पथरीले पहाड़ी ढलानों पर लुका छिपी का खेल खेलते हुए जाते। जब हम थक जाते तब घोड़े या खच्चर की सवारी करते। रास्ते में आने वाले विश्राम स्थलों से परिचित होने के कारण हम दौड़कर अपने समूह से दो तीन किलोमीटर आगे तक बढ़ जाते और वहां पर रसोई के लिए सूखी लकड़ियां इकट्ठी करते। मुझे टेंटों में रहना भी अच्छा लगता था और फिर नये स्थान पर स्कूल जाने का एक अलग ही उत्साह होता था।

प्रकृति के साथ मेरे इस खुलाव ने मुझे निडर और स्वतन्त्र बना दिया था। दस साल की आयु में ही मैं जंगलों और पहाड़ी ढलानों पर प्रायः अकेली घूमा करती थी। बसंत के दिनों में मैं उन प्रवासी पक्षियों के झुंडों को देखने के लिए चुपचाप घर से बाहर निकल आती थी जो सर्दियों में मैदानों में रहते थे। मैं घूमते घुमाते लोकप्रिय फूल ब्रह्म कमल भी



नकुरी - मेरा गांव

घर लाया करती थी और झोली भरकर एक विशेष फूल की सिन्दूरी रंग की सुंदर कलियां लाती थी जिनके पत्तों से स्फूर्तिदायक पेय बनता है।

मैं अपनी कक्षा में सबसे अधिक शरारती थी। एक घटना जो मुझे आज भी स्पष्ट रूप से याद है, एक युवा अध्यापिका के बारे में थी जो बहुत ही सुंदर और गौरवर्णीय थी। मैं और सभी लड़कियां उससे ईर्ष्या करती थीं और उसकी सुंदरता का रहस्य जानने के लिए उत्सुक रहती थीं। एक दिन मैं अपनी दो विश्वसनीय सहेलियों के साथ चुपचाप उसकी कक्षा से भाग निकली और खिड़की के रास्ते से उसके कमरे में घुस गई। हम तीनों उसकी ड्रेसिंग टेबल पर रखी हुई अनेक प्रकार की बोतलों और जारों को देख रही थीं कि हमें बाहर पैरों की आहट सुनाई दी। हम शीघ्रता से बिस्तर के नीचे छिप गए। अध्यापिका एक पतली और लंबी छड़ी लिए अंदर आई, जो उन्होंने तुरन्त ही बिस्तर के नीचे घुमा दी। हम आखिरी कोने तक सिकुड़ते चले गए लेकिन तभी मेरी एक सहेली हीं हीं कर हँस दी। इसके बाद तो सब को दंडित किया गया। नेता होने के नाते मेरी सबसे अधिक पिटाई हुई। तीसरी लड़की को आधी पिटाई से ही छुटकारा मिल गया, क्योंकि तब तक छड़ी टूट गई थी।

इसके साथ ही मेरी सुन्दरता की खोज समाप्त हो गई। जब भी मैं उस घटना तथा उसके परिणामस्वरूप होने वाली पिटाई के बारे में सोचती हूँ, मैं सौंदर्य प्रसाधनों के विचार से ही कांप जाती हूँ। मैं आज भी किसी प्रसाधन का उपयोग नहीं करती हूँ।

मुझे स्कूल जाना अच्छा लगता था। मैं सुबह जल्दी उठ जाती थी और कमला दीदी अथवा माँ के साथ अपना दोपहर का भोजन तैयार कराने में मदद करती थी। मैं उन लड़कियों के समूह में पहुंचने वाली पहली लड़की होती थी जो सबसे पहले स्कूल जाती थी।

मैं हर तरह की बाहरी क्रीड़ा में विशिष्टता हासिल करना चाहती थी, विशेष रूप से लड़कों के साथ होने वाली प्रतियोगिताओं में। मैं दौड़ की वार्षिक प्रतियोगिताओं जैसे कि तीन टंगड़ी, सुई धागे वाली दौड़, बोरा दौड़, तथा सिर पर पानी भरा मटका लेकर होने वाली दौड़ आदि का अभ्यास प्रतियोगिताओं के शुरू होने से पहले पूरे परिश्रम से करती थी। चूँकि मैं अपनी पढ़ाई लिखाई में भी काफी अच्छी थी, मेरे माता-पिता खेलों में मेरी रुचि को देखते हुए मुझे प्रोत्साहित करते थे और जब भी मैं कोई पुरस्कार लेकर घर आती थी, वे बहुत अधिक गौरवान्वित महसूस करते थे।

एक इतवार की सुबह की बात है कि जब स्कूल हरसिल में चल रहा था, हम दस लड़के लड़कियों ने पहाड़ पर पिकनिक मनाने का निश्चय किया। हम 3500 मीटर से ऊपर हिम रेखा तक पहुंच गए और हम अपने पैरों के नीचे चरमराती बर्फ को महसूस करते हुए आंदित हुए थे। हम ऊंचे चढ़ते ही गए, जब तक कि हममें से एक लड़की ने भूख की शिकायत नहीं की। तब एक ऊंची उठी हुई चट्टान ढूंढ कर, हम उस पर खाना खाने के लिए बैठे। इस धारणा से कि हम कहीं भी पहाड़ी नदी या नाले से पानी लेकर पीते रहेंगे, हम अपने साथ पानी नहीं लाये थे। लेकिन इस ऊंचाई पर (लगभग 4000 मीटर)हर चीज बर्फ से ढकी हुई थी। इसलिए हमने अपनी प्यास बर्फ के टुकड़े चूस चूस कर बुझाई।

हमारी परेशानियां वास्तव में वापसी यात्रा में शुरू हुईं। दोपहर बाद का समय था और ढलान पर सूरज की किरणें नहीं पड़ रही थीं। बर्फ और अधिक पक्का जम जाने के कारण फिसलन वाला हो गया था, इसलिए उतराई वाली हमारी यात्रा न केवल धीमी थी, बल्कि खतरनाक भी थी।

इन सब कष्टों के साथ साथ हमारे दल के काफी सदस्यों को सिरदर्द और मिचली की शिकायत होने लगी। एक लड़के को पूरे खाने की उल्टी हो गई। हमने सोचा कि शायद यह विषाक्त भोजन के कारण अथवा, दूषित बर्फ, जो हमने चूसा था, के कारण हो गयी है। सामान्यत: यह भी विश्वास किया गया कि यह अजीब तरह की बीमारी इस ऊंचाई पर पाए जाने वाले विशेष फूलों और पत्तियों की गंध के कारण हुई है। अब मैं इस बात को जानती हूँ कि ये लक्षण तीन हजार मीटर की ऊंचाई पर चलने वाली हवा में आक्सीजन की कमी के कारण हो जाते हैं। जैसे जैसे अंधेरा बढ़ता गया, हमें जगह-जगह रुकना पड़ता था और झाड़ियों से अपने सिर को ढकना पड़ता था। हमारे पास न खाना था न पानी और हमने सबेरा होने के इंतजार में ठंड और दुखदायक रात गुजारी।

जब हम अगली सुबह घर पहुंचे, हमें कहीं से ज़रा भी सहानुभूति नहीं मिली। इसके विपरीत हमारी पिटाई की गई। लेकिन इससे मैं ज़रा भी नहीं डरी। मैंने पहाड़ों पर चढ़ने के उत्साह का मजा लिया था और अब मुझे कोई आगे बढ़ने से रोक नहीं सकता था।

मैं लगभग तेरह वर्ष की थी और आठवीं की परीक्षा अच्छे अंकों से पास की थी, तभी मेरे पिता ने कहा कि वे अब मुझे स्कूल में भेजने का खर्च बर्दाशत नहीं कर सकते और अब मुझे घर के काम में मदद देनी चाहिए। यद्यपि मेंने अपने मन में ऊंची शिक्षा प्राप्त करने का निश्चय कर लिया था, इसलिए मैं दिन के समय अपने हिस्से का, बल्कि उससे कहीं अधिक घर का काम करती थी और अपने मित्रों से स्कूल की किताबें उधार लेकर देर रात तक बैठकर अध्ययन करती थी। मेरे तीव्र उत्साह और दृढ़ संकल्प को देखकर हर आदमी प्रभावित था और अंत में मेरी माता और बहन कमला ने मेरे पिता से मुझे आगे पढ़ाने की वकालत की और मुझे नवीं कक्षा में दाखिला लेने की अनुमति मिल गई।

मैं जानती थी कि मुझे आगे पढ़ाने के लिए घर में पैसे की जरूरत थी, इसलिए मैंने सिलाई का काम सीख लिया और मैं सलवार-कमीज के सूट सिलकर पांच से छह रुपए प्रतिदिन कमाने लगी। मैं पढ़ाई में काफी अच्छी थी, लेकिन खेल कूद में और भी बेहतर। जिन-जिन खेलों में मेंने भाग लिया, अधिकांश मे प्रथम रही और मैदानी खेलों जैसे कि गोला फैंक, डिस्कस फैंक, भाला फैंक, व लम्बी दौड़ में अनेक कम जीते।

लेकिन जैसे ही मैंने हाई स्कूल परीक्षा पास की मेरे पिता ने मुझे कालेज में दाखिला न दिलाने के बारे में दृढ़ निश्चय कर लिया। समस्या वही थी—घर में पढ़ाने के लिए पर्याप्त पैसा नहीं था। तब मेरी प्रधानाचार्य ने हस्तक्षेप किया। उन्होंने लिखा कि मैंने केवल तीन अंकों से फर्स्ट डिवीजन खो दी है और चहुंमुखी प्रतिभावान होने के नाते मेरा भविष्य

उज्जवल है। पिताजी एक बार फिर द्रवित हो उठे और मैंने ''प्री मैडिकल'' करने की दृष्टि से रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान और जीव विज्ञान लेकर इंटरमीडिएट कक्षा में दाखिला ले लिया। यद्यपि मैंने विज्ञान विषयों में इंटरमीडिएट पास कर लिया, मैं ''प्री मैडिकल'' की परीक्षा में सफल नहीं हो सकी और मैंने साहित्य विषय ले लिए। हिमालय के प्रति विशेष रुचि होने के कारण मैंने बी.ए. में संस्कृत विषय लिया। मैं जानती थी कि कालिदास का ''कुमार संभव'' तथा अन्य संस्कृत साहित्य इन पर्वतों के वर्णन में काफी समृद्ध है। इन पर्वतों को कालिदास ने **''पृथ्वी-मापक दंड''** की संज्ञा दी है।

मुझे बी.ए. करने की अनुमति तो मिल गई, लेकिन आगे की पढ़ाई के लिए परिवार का विरोध जारी रहा। मेरे संकल्प पर इसका कोई अंतर नहीं पड़ा। अब कोई भी वस्तु या व्यक्ति मेरे निश्चय समय के अंदर एक राइफल, एक स्टेनगन और एक ब्रेन लाइट मशीनगन को पूरी तरह खोलना था और फिर उसी तरह से जोड़ना था। मैं इसमें प्रथम आई। मेरी अध्यापिका बहुत प्रसन्न थीं और लड़कों को व्यंग्यात्मक रूप से कह रही थीं कि लड़कियों को ही अब देश की रक्षा करनी होगी। लड़कों को तो चूड़ियां पहन कर घर बैठना चाहिए।

बी.ए. करने के उपरांत मुझे आगे की पढ़ाई में विशेष बाधा का सामना नहीं करना पड़ा, क्योंकि तब तक मेरे पिता चाहने लगे थे कि एम.ए. की डिग्री प्राप्त करने वाली अपने गांव की में पहली लड़की बनूं। मैंने डी.ए.वी. कालेज देहरादून से संस्कृत में एम.ए. किया और गढ़वाल विश्वविद्यालय श्रीनगर से बी.एड. किया।

उच्च शिक्षा प्राप्त करना मेरा प्रथम उद्देश्य था। इसलिए मैंने पर्वतारोहण की अपनी प्रबल इच्छा को रोककर रखा। अब चूंकि मैंने एम.ए., बी.एड. कर लिया था, मैं अपने लक्ष्यों को पुर्नव्यवस्थित कर सकती थी और मैंने अपने आप को पर्वतारोहण के लिए पूरी तरह से समर्पित कर दिया।



मैंने पर्वतारोहण सीखा

मैं नेहरू पर्वतारोहण संस्थान में प्रवेश पाकर एक अच्छी पर्वतारोही बनने की इच्छुक थी, यद्यपि मेरी माँ का विचार था कि यह काम लड़कियों के लिए बहुत ही जोखिम भरा है। लेकिन मुझे अच्छी शिक्षा देने के लिए मेरे पिता द्वारा किए गए त्यागों को मैं भूली नहीं थी। अब परिवार के लिए कुछ करने की बारी मेरी थी। मैंने अनेक कॉलेजों में अध्यापिका की नौकरी के लिए आवेदन पत्र भेजे लेकिन मुझे केवल कम वेतन वाले अस्थायी पदों के लिए ही उत्तर मिले और वे भी केवल प्राइमरी स्तर के। मैं इतने परिश्रम से प्राप्त की गई अपनी शैक्षणिक योग्यताओं का अवमूल्यन करने के लिए तैयार नहीं थी। इसलिए इन सब नौकरियों को मैंने स्वीकार नहीं किया।

घर में खाली बैठने की बजाय मैंने नेहरू संस्थान के प्रारंभिक पर्वतारोही कोर्स में प्रवेश पाने के लिए आवेदन किया। लेकिन वहां पर उस वर्ष के सभी स्थान भरे जा चुके थे। मुझे अगले वर्ष प्रवेश मिल गया और मैंने वहां पर बर्फ और चट्टानों पर चढ़ने के तरीकों का अध्ययन किया और "रैपलिंग" के रोमांच का अनुभव किया। रैपलिंग का अर्थ है— ऊंची खड़ी चट्टान अथवा हिम खंड मे एक नाइलोन की रस्सी के सहारे कुछ ही क्षणों में नीचे आना। हमें शिविर लगाने के तरीके अथवा पर्वतीय शिखरों को सुरक्षित ढंग से पार करने के तरीके भी सिखाये गए।

नेहरू संस्थान के उपप्रधानाचार्य मेजर प्रेमचन्द प्रशिक्षण अधिकारी थे। वह बड़े कठोर प्रशिक्षक थे, जो बहुत ऊंचे स्तर के प्रदर्शन की अपेक्षा करते थे। मैंने सोचा कि मैंने



एक सीधी ढलाऊ चट्टान से रैपलिंग। करते हुए

शायद इतना अच्छा प्रदर्शन किया है कि मुझे रजत हिम पदक और एक प्रमाण पत्र तो मिलेगा ही। परंतु वास्तव में मुझे "ए" ग्रेड मिला था और मुझे उस कोर्स की सर्वोत्तम छात्रा घोषित किया गया था। उपप्रधानाचार्य ने अपनी रिपोर्ट में मुझे "एवरेस्ट सामग्री" के रूप में लिखा। समय के उस दौर में मैंने इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया।

जब मैंने सुना कि "इंडियन माउंनटेनियरिंग फाउडेंशन" (आई.एम.एफ.) 1984 में एवरेस्ट पर जाने के लिए एक मिले जुले अभियान की योजना बना रहा है और उनको पर्वतारोहण में प्रतिभावन और अनुभवी महिलाओं की तलाश है तो मैंने इस पर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया क्योंकि इस स्तर पर मैं दोनों में से कुछ भी होने का दावा नहीं कर सकती थी। इसलिए मैं आई.एम.एफ. का पत्र पाकर आश्चर्यचकित रह गई। इसमें सूचित किया गया था कि मुझे एवरेस्ट अभियान के लिए आयोजित जाँच शिविर के लिए चुना गया है। मुझे इस बात की पुष्टि करने के लिए कहा गया था कि मैं शिविर में उपस्थित होऊं।

उन्होंने किस तरह से एवरेस्ट के लिए मेरे बारे में विचार किया ? मैंने तो बहुत कम पर्वतारोहण किया था। एवरेस्ट वास्तव में एक पहुंच से बाहर की चीज थी। इतने अधिक महत्वपूर्ण साहसिक कार्य के लिए अपनी योग्यता पर संदेह होने के कारण मैंने आई.एम.एफ. के पत्र का उत्तर नहीं दिया। मैंने केवल आगामी प्रशिक्षण कोर्स के बारे में ही सोचा था। अक्तूबर 1982 में मुझे एडवांस कोर्स के लिए खाली हुए एक स्थान में प्रवेश मिल गया। इस कोर्स में हमने चट्टान, बर्फ और हिम पर चढ़ने की और अधिक उच्च तकनीकें सीखीं। हमें अभियान को आयोजित करने का भी प्रशिक्षण दिया गया। अधिक ऊंचाई के अनुभव के रूप मे मैंने "ब्लैक पीक" अथवा "काला नाग" (6,387 मीटर) की चढ़ाई की।

इस कोर्स में भी मुझे "ए" ग्रेड मिला और अभियानों में भाग लेने के लिए मेरी संस्तुति की गई थी। मेरे प्रशिक्षक बहुत अधिक प्रोत्साहन देने वाले थे और वे कहते थे मेरे अंदर अच्छे पर्वतारोही के लक्षण हैं। मुझे अपनी आरोहण की दक्षता को और अधिक बढ़ाने के लिए हर अवसर का लाभ उठाना चाहिए। लगभग इसी समय मुझे एवरेस्ट के जांच कैम्प में भाग लेने के लिए आई.एम.एफ., की तरफ से दूसरा पत्र प्राप्त हुआ। जब मेरे प्रशिक्षकों को इस बात का पता चला कि मैंने आई.एम.एफ. के पहले पत्र की उपेक्षा की है और अब दूसरा पत्र मिला है, उन्होंने कहा "बचेन्द्री क्या तुम नहीं समझतीं कि तुम

एक सुनहरा अवसर खो रही हो ?" उनके कहने पर मैंने अपनी सहमति प्रदान कर दी।

इसके बाद मैं एक बदली हुई इंसान थी। यदि आई.एम.एफ. ने मुझे एवरेस्ट दल के लिए संभावित प्रत्याशी समझा था, मैं उनकी बात कैसे गिरा सकती थी। उत्साहपूर्वक मैंने आरोहण के लिए आवश्यक घरेलू अभ्यासों के लिए अपना नाम लिखवा दिया। अपने आम को मजबूत बनाने के लिए मैं घास चारे और सूखी लकड़ी के भारी से भारी गट्ठर घर लाने लगी। मैं रोज आने जाने का रास्ता भी बदल देती थी। मैं अधिक दुर्गम रास्तों और घाटियों से होकर निकलती और जान बूझ कर पत्थरों के ऊपर से चलती अथवा सीधी खड़ी ढलाऊ चट्टानों से उतरती जिससे कि मैं बेहतर संतुलन प्राप्त कर सकूं, ऊंचाई के डर को निकाल सकूं और चक्कर से निज़ात पा सकूं। मेरे सभी क्रियाकलापों का उद्देश्य एक सच्चा दक्ष पर्वतारोही बनना था।

1982 के उत्तरार्ध में मैंने गंगोत्री के जाँच कैम्प में भाग लिया। मेरे प्रशिक्षक मेरे प्रदर्शन से बहुत अधिक प्रसन्न हुए और इस प्रशिक्षण के दौरान मैंने गंगोत्री (6672 मीटर) और रूड़गेरा (5819 मीटर) की चढ़ाई की। मुझे अपनी आरोहण योयग्ता में आत्मविश्वास मिला।

इसके तुरंत बाद मुझे सूचना मिली कि सितम्बर-अक्तूबर 1983 में होने वाले अंतिम चयन शिविर के लिए मेरा नाम लिया जा रहा है।

भागीरथी - सात बहनें

जिस ढंग से मेरा पर्वतारोहण का जीवन ढल रहा था, मैं उससे प्रसन्न थी लेकिन इससे मेरी या मेरे परिवार की आर्थिक कठिनाइयों का समाधान नहीं हुआ। तब फरवरी 1983 में नेशनल एडवैंचर फाऊन्डेशन (एन.ए.एफ.) के निदेशक ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह, नेहरू संस्थान के प्रशिक्षकों के लिए एक साहसिक कोर्स चलाने के लिए उत्तरकाशी आये और उन्होंने छात्रवृत्ति के लिए मेरे सहित सात स्थानीय और शिक्षित महिलाओं का चयन किया।

मैंने इस प्रतिष्ठित दक्ष तथा वरिष्ठ पर्वतारोही में भरोसा कर उन्हें अपनी समस्या से अवगत कराया कि मेरे माता-पिता परिवार के आर्थिक बोझ को कम करने की दृष्टि से मुझ पर विवाह करने के लिए दबाव डाल रहे थे। मैंने उनसे ऐसे लोगों के लिए जो निर्धन और जीविका रहित थे, कुछ रास्ता निकालने के लिए कहा, ताकि पर्वतारोहण में हमारी रुचि और प्रतिभा का उपयोग हो सके।

दूसरे दिन प्रातः ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह ने हमें "**भागीरथी-सेवन सिस्टर्स एडवैंचर क्लब**" शुरू करने के लिए एन.ए.एफ. के आवेदन पत्र भरने के लिए कहा। उन्होंने स्पष्ट करते हुए बताया कि यह लड़कियों और महिलाओं की एक अलग प्रकार की संस्था होगी जो जोखिम के कार्यों में लगी लड़कियों की सहायता करेगी। उन्होंने वायदा किया कि यह योजना प्रशिक्षित लड़कियों और महिलाओं की आर्थिक चिंताओं का ध्यान रखेगी। हमारा मनोबल आसमान छूने लगा और मन लगाकर गंभीरतापूर्वक प्रशिक्षण कार्य में जुट गए।

सात बहनों में से प्रत्येक ने अच्छा नाम कमाया। ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह ने बताया कि हमारा प्रदर्शन पुरूषों की तुलना में कहीं अधिक बेहतर था।

हमारे प्रवास के अंतिम दिनों तक ब्रिगेडियर हमारे लिए एक पिता की तरह हो चुके थे और मेरे सुझाव पर हमने उन्हें "छोटे चाचा" कहकर पुकारना शुरू कर दिया।

जब छोटे चाचा ने 28 फरवरी 1983 को उत्तरकाशी छोड़ा, हम सब की आँखों में आंसू थे। लेकिन उन्होंने तीन महीने के अंदर-अंदर लौट कर आने का वादा किया जिससे



सात बहनें

वे हमारे साहसिक कार्यक्रमों के चलाने में मदद कर सकें। उसी दौरान हमें स्थानीय बच्चों को चट्टानों की चढ़ाई के लिए ले जाने के लिए कहा गया। हमारे अपने कार्यक्रमों को चलाने की संभावना काफी रोमांचकारी थी। मैं इसकी तैयारी में नकुरी से लेकर तेखला में चट्टान आरोहण क्षेत्र तक घूमने और जॉगिंग का अभ्यास करती थी। यह रास्ता एक तरफ से अट्ठारह किलो मीटर पड़ता था। इस अभ्यास ने मुझे आरोहण की भावी चुनौतियों का सामना करने के लिए मज़बूत बनाने में सहायता की।

वायदे के अनुसार ब्रिगेडियर जून में आ गए। वे अपने साथ हमारे लिए शिविर लगाने और ट्रैकिंग उपकरणों के पच्चीस सैट साथ लाए जिससे कि लड़कियों के लिए दो माहसिक कोर्स साथ-साथ चलाए जा सकें। सेना की सहायता से उन्होंने तेखला में एक छोलदारी शिविर लगाने की व्यवस्था भी की।

पहले समूह में जमशेदपुर से आई तेरह लड़कियां थीं। दूसरे दल में मेघालय से आई शिलांग की पन्द्रह चुस्त खासी लड़कियां थीं।

प्रत्येक कोर्स में छात्रवृत्ति के आधार पर स्थानीय लड़कियों को सम्मिलित कर बीस-बीस के समूह बनाए गये। मुझे कोर्स का निदेशक और विजया पंत को उपनिदेशक बनाया गया। क्वार्टर मास्टर तथा चिकित्सा सहायक के कार्य बारी बारी से दूसरी सात बहनों को सौंपे गये। कोर्स में काम करने के लिए हमें कुछ मानदेय भी दिया गया।

कार्यक्रम में विभिन्नता थी। चट्टान अरोहण के लिए तीन दिन रखे गये थे, एक दिन इसके बाद नदी पार करने के लिये तथा शिविर के लिए था। इसके अतिरिक्त पर्वतारोहण की रस्सियों का उपयोग रसोई बनाना तथा बीहड़ जंगल में सुरक्षा प्राप्त करना भी सिखाया गया था। हमारे साथ एक वन्य रेंजर था जिसने हमें उस क्षेत्र की वनस्पति और वन्य जीवन के बारे में काफी कुछ बताया। दो छोटी और एक लंबी यात्रा सहित हमने लगभग 150 किलोमीटर का रास्ता तय किया और 2500 से 3000 मीटर तक की ऊंचाई की चढ़ाई उतराई की।

लम्बी यात्रा के दौरान हमारा सर्वोच्च शिविर लगभग 3000 मीटर पर प्राकृतिक सौन्दर्य स्थली डोडीताल में था। यहाँ पर ठंडे पानी और मछलियों से भरपूर एक सुंदर झील के चारों और आकर्षक इन्द्रधनुषी आभा लिए लम्बे घने हरे हरे देवदार के वृक्ष थे। हम यहाँ पर तीन रात रुके। हम लगभग 4000 मीटर की ऊंचाई पर बर्कारियां खाल में पहाड़ की चोटी तक भी गये। कुछ लड़कियों का तो बर्फ के साथ यह पहला संपर्क था और वे खेलते कूदते बिलौटों की तरह बर्फीले मैदानों में कूदती फांदती और एक दूसरे के ऊपर बर्फ के गोले फेंकती नजर आती थीं। डोडीताल लौटने से पहले उन्हें बर्फ पर फिसलने के बारे में तथा अन्य बर्फ क्रीड़ाओं में कुछ आरंभिक शिक्षण दिया गया।

मैंने छोटे चाचा के निर्देशन में विजया की मदद से अपना पहला कोर्स पूरा किया। उन्होंने हमें निर्देशन दिया परन्तु विस्तार से कार्य करने के लिए स्वतंत्र कर दिया। उनका सबसे अधिक स्मरणीय योगदान था, मंत्र मुग्ध करने वाली घटनाओं से भरपूर पर्वतों

तथा आरोहण संबंधी विभिन्न विषयों पर उनकी बातें। जब भी छोटे चाचा चिल्लाते ''लड़कियों, एक और कहानी सुनो,'' हम सब उत्सुकता से उनको चारों तरफ से घेर लेतीं। मैंने उन्हें बताया कि मैं उनके पढ़ाने के तरीके से कितनी प्रभावित थी, उन्होंने विनम्रता से कहा, ''मैंने यह तेनज़िंग से सीखा है।''

अपने कार्यालय संबंधी काम का बहाना बनाकर छोटे चाचा ने दूसरा कोर्स पूरी तरह से स्वतंत्र रूप से हमें करने के लिए कहा—मैं शुरू में आशंकित थी, लेकिन जिम्मेदारी के साथ ही विश्वास जमता गया और सभी कुछ ठीक-ठाक हो गया। जब बच्चों ने छोटे चाचा को बताया कि उनको ''बचेन्द्री दीदी'' के साथ ट्रेकिंग में कितना आनन्द आया, मुझे अत्यधिक संतुष्टि और विशेष उपलब्धि का अनुभव हुआ।

जुलाई 83 के मध्य में ब्रिगेडियर ज्ञानसिंह प्रसिद्ध पर्वतारोही चन्द्रप्रभा अटवाल (मेरे लिए चन्द्रा दीदी), विजया पंत और मुझे लेकर दिल्ली गए। इस समय तक चन्द्रा दीदी ''भागीरथी - सेवन सिस्टर्स एडवेंचर क्लब'' की अध्यक्षा और मैं उपाध्यक्षा चुन ली गई थीं।

राजधानी में छोटे चाचा ने टेलीविजन के लोकप्रिय कार्यक्रम ''घर बाहर'' में हमारे इंटरव्यू की व्यवस्था कर दी थी। तीन राष्ट्रीय दैनिक पत्रों ने भी हमारा साक्षात्कार लिया था। हमारे फोटो सहित यह साक्षात्कार और लेख दूसरे दिन सबेरे के अखबारों में छपे और जब हम जनपथ पर खरीदारी कर रहे थे, हमें अनेक युवाओं ने रोका और पूछा ''क्या मैंने तुम्हें टी.वी. पर नहीं देखा था?'' अथवा ''क्या तुम वही महिलाएं हो जिनके चित्र मैंने अखबार में देखे थे?''

हमारे छोटे क्लब ''भागीरथी - सेवन सिस्टर्स एडवैंचर क्लब'' ने राजधानी में पहले से ही रंग जमाना शुरू कर दिया था।

यशस्वी लोगों से भेंट

अगस्त 1983 के अंत में नई दिल्ली में आयोजित प्रथम "हिमालय माउंटेनियरिंग एण्ड टूरिज़्म मीट" में मुझे निमंत्रित किया गया। इनमें दो सौ से अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया, जिनमें अधिकांश पर्वतारोहण के क्षेत्र में अंर्तराष्ट्रीय ख्याति की विभूतियां थीं। यद्यपि मुझे इतने अधिक यशस्वी लोगों की उपस्थिति में भय लग रहा था, लेकिन मुझे अंदर से बहुत अधिक प्रेरणा भी मिल रही थी। वास्तव में इन प्रतिष्ठित लोगों से उस समय मेरी भेंट केवल कभी कभी लौट कर आने वाली स्मित मुस्कान तक ही सीमित रही, जब तक कि मैं उस ताज पैलेस होटल के भीड़ भरे कनवैन्शन हॉल में एक व्यक्ति से धक्का खाकर अचानक टकरा नहीं गई।

मैं दो महान व्यक्तियों से अनजान नहीं रह सकी। एक तो अनुश्रुत शेरपा तेनजिंग नोर्गे जो हिलेरी के साथ एवरेस्ट की चोटी पर पहुंचने वाले पहले व्यक्ति थे और दूसरी जापान की नाटी महिला जुन्को ताबई जो पृथ्वी की सबसे ऊंची चोटी पर कदम रखने वाली पहली महिला है।

मैं जब स्कूल में पढ़ती थी तब से ही तेनजिंग के प्रति आदर भाव रखती थी, लेकिन अब मैं उनके इतने समीप थी और मेरे अंदर अपना परिचय देने का साहस नहीं था। तभी नेहरू संस्थान के डॉक्टर की पत्नी शेरी ने मुझे सामूहिक फोटोग्राफ में शामिल होने के लिए कहा और मैंने स्वयं को तेनज़िंग के साथ खड़े हुए पाया। यद्यपि मैं एवरेस्ट के इस विजेता से बात करना चाहती थी लेकिन मेरी ज़बान बंद हो गई और एक क्षण के पश्चात ही तेनज़िंग को उनके प्रशंसक दूर ले गए।



इस मीटिंग के लगभग तुरन्त बाद बद्रीनाथ से ऊपर ''माना'' पर्वत पर आयोजित ''एवरेस्ट 84 अभियान'' के लिए अंतिम चयन शिविर में मैं गई। शुरू-शुरू में मुझे ज्वर आ गया और मुझे ''बेस कैम्प'' में ही रुकना पड़ा। मैं बहुत चिंतित थी कि यदि मैं ठीक नहीं हुई और चयन शिविर कोर्स को पूरा नहीं कर सकी तो एवरेस्ट दल के लिए मेरा विचार नहीं किया जाएगा। यह मेरे चिर प्रतीक्षित सपने का दुखद अंत होगा। भाग्यवश मैं जल्दी ही पूरी तरह से स्वस्थ हो गई और छूट गए प्रशिक्षण कोर्स को आसानी से पूरा करने में समर्थ थी। इस शिविर में ऊंचा चढ़ने की बजाय अभ्यास करने पर अधिक जोर था। फिर भी मैं लगभग 7500 मीटर ऊँची ''माना'' चोटी पर चढ़ सकी जो उस वक्त तक का सर्वाधिक रिकार्ड था।

यह शिविर एवरेस्ट दल में प्रवेश पाने के लिए निर्णायक था, इसलिए प्रत्येक ने अपनी भरसक कोशिश की। बाकी सभी लोग अनुभवी पर्वतारोही थे, मैं ही उनमें अकेली नौसिखिया थी। फिर भी लगा कि मैंने तकनीकी चढ़ाई, शारीरिक क्षमता और ऊंचाई के अनुकूल अपने आप को ढालने में अच्छी तरह से तैयार कर लिया है। यद्यपि मैं यह नहीं कह सकती थी कि अंतिम वरीयता सूची में मेरा क्या स्थान होगा। लेकिन फिर भी आरोही के रूप में मुझे अपने कौशल पर विश्वास था।

जब शिविर समाप्त हुआ प्रतिभागियों को अपना सामान सड़क के किनारे तक ले जाना था। अधिकांश प्रतिभागी शक्ति और स्फूर्ति युक्त लगे और अनेक अपना सामान लेकर नीचे सड़क की ओर तेजी से चल दिये। मैं सावधानी पूर्वक चल रही थी और मैंने अपनी धीमी परंतु संतुलित चाल कायम रखी। मेजर प्रेमचंद ने मुझे देखा और कहा, ''बचेन्द्री यही चाल है जो तुम्हें एवरेस्ट पर रखनी होगी।''

उनके उस कथन का क्या अर्थ था? क्या मैं उम्मीद कर सकती हूँ कि शिविर में मैंने अपना ग्रेड बनाया होगा।

आरोही दल

एवरेस्ट के लिए हमारा भारत की ओर से यहां चौथा अभियान था। पहले दो दल 1960, 1962 में शिखर की 200 और 130 मीटर की ऊंचाई से ही वापस आ गए थे। तीसरे दल में एवरेस्ट पर चढ़ने वाले नौ आरोही थे।

पूरे विश्व के लगभग 170 व्यक्तियों में जिन्होंने एवरेस्ट की चढ़ाई की थी, केवल चार ही महिलाएं थीं। लेकिन भारत की युवा महिलाओं ने अनेक पर्वतों पर अपनी क्षमता दिखाई थी। तीन ने 1981 में "किलर नन्दा देवी" (7816 मी०) की चढ़ाई की थी। अतः इस अभियान का मुख्य उद्देश्य यदि संभव हुआ, एक अथवा अधिक भारतीय महिलाओं को एवरेस्ट शिखर पर देखना था।

मैं एवरेस्ट दल की घोषणा के इंतजार में चिताग्रस्त थी। मेरा परिवार भी मेरी चिंता से परेशान था और मेरा भाई बचन, जो खुद पर्वतारोही है, विशेष रूप से मुझसे मिलने घर पर आया। दल में लिए जाने की मेरी संभावना हमारी दैनिक चर्चा का विषय था। मुझे अपने प्रदर्शन पर अधिक आशा थी जिसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा मेरे प्रशिक्षकों ने की थी। इसके अतिरिक्त कर्नल प्रेमचन्द्र ने 1981 में न केवल मुझे "एवरेस्ट सामग्री" कह कर पुकारा था बल्कि अभी हाल ही में संकेत दिया था कि मुझे एवरेस्ट दल में शामिल किया जा सकता है।

18 अक्तूबर 1983 के आकाशवाणी के सायंकालीन समाचार बुलेटिन के अनुसार कर्नल डी०के० खुल्लर को एवरेस्ट अभियान दल का नेता चुना गया था और दल के नामों की घोषणा दूसरे दिन प्रातः की जाएगी। मैंने यह समाचार उत्तरकाशी में सुना जहाँ मैं

लड़कियों के प्रारंभिक कोर्स के लिए अतिथि प्रशिक्षक के रूप में निमंत्रित थी।

मैं उस रात बिल्कुल नहीं सो सकी। सूर्योदय से पहले ही उठकर मैं समाचार विक्रेता की दुकान पर घंटों पहले पहुंच गई, जबकि समाचार पत्रों का बंडल लेकर लड़का काफी देर बाद आया। सांस रोके हुए मैंने अखबार की एक प्रति छीनी और कांपते हाथों से उसे खोला। मेरी आंखें अधीरतापूर्वक एवरेस्ट दल की सूची में ऊपर नीचे दौड़ लगा रही थी, जबकि अंतिम रूप से वे उस एक नाम पर आकर ठहर गई जिसकी मुझे तलाश थी। यह



कर्नल खुल्लर

नाम था—"बचेन्द्री पाल" बाद में मुझे मालूम हुआ कि पर्वतारोहण में नौसिखिया होने के बावजूद भी मेरा चयन सर्वसम्मति से हुआ था।

मैं सीधी मिठाई वाले की दुकान पर दौड़ी, कुछ लड्डू खरीदने के बाद मैं कूदकर सामने से आती उस पहली गाड़ी में बैठ गई जो मेरे गाँव की ओर जा रही थी। अपने गाँव के नीचे की सड़क पर जैसे ही मैं ट्रक से उतरी, मैंने ऊपर देखा कि बचन चबूतरे पर मेरा इंतज़ार कर रहा था। वह दौडकर नीचे आया और मुझे बीच रास्ते में मिला। ज़ोर से चिल्लाकर मैंने यह सुखद समाचार उसे पहले ही सुना दिया था। जैसे ही हम मिले, उसनें मुझे गले लगा लिया और खुशी सें नाचने लगा। तब तक पूरा परिवार तथा अन्य व्यक्ति भी इकट्ठे हो गए थे। सबको मिठाई बाँटी गईं। मेरी माँ की आँखों से खुशी के आँसू बह रहे थे और मेरे पिता मेरे सिर को प्यार से सहलाते हुए मेरी तरफ गर्व से देख रहे थे।

छह अन्य महिलाओं का चयन हुआ था। वे सभी मज़बूत और अनुभवी पर्वतारोही थीं। उनकी तुलना में मैं एक नौसिखिया ही थी। कर्नल डी०के० खुल्लर और ले० कर्नल प्रेमचन्द के अलावा दल में ग्यारह अन्य पुरुष थे।



एवरेस्ट आरोही

एवरेस्ट के लिए प्रशिक्षण

ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह को विश्वास था कि चन्द्रा दीदी और मैं "एवरेस्ट 84" के लिए चुने जायेंगे, और उन्होंने एवरेस्ट पूर्व का एक स्वप्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किया था जिसको हमने दल की घोषणा होते ही शुरू कर दिया। संक्षेप में, प्रशिक्षण में 12 से 15 कि०ग्रा० का बोझ पीठ पर लादकर लगभग 600 मीटर प्रतिदिन चढ़ाई और 8 से 10 कि० मीटर की जागिंग अनिवार्य थी।

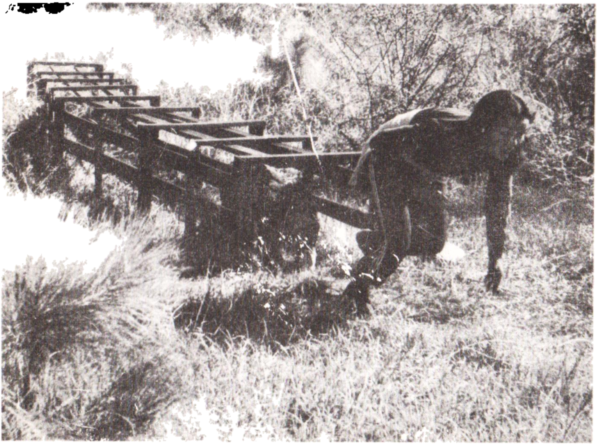
इस कठिन शारीरिक श्रम के लिए हमारा खाना भी विशेष प्रकार का होता था जिसमें प्रोटीन युक्त खाद्य सामग्री जैसे पर्याप्त मात्रा में दूध, हरी सब्जी और शक्कर होती थी, हमारा दैनिक खाना 3500 से 4000 कैलोरी का होता था।

नकुरी गांव के लोग प्रत्येक सुबह मुझे पत्थरों से भरे बोरे को लेकर पहाड़ी की तलहटी से लेकर चोटी तक चढ़ते हुए देखते और आनंदित होते। किसी ने टिप्पणी भी की कि मैं शायद अक्षय होती हुई पहाड़ियों की ऊंचाई को पुनर्स्थापित करने की कोशिश कर रही हूं। मेरे पिता भी इस मज़ाक में भाग लेते। "बचेन्द्री को बड़ी बड़ी डिग्रियां लेने के बाद भी अपनी पसंद की कोई नौकरी नहीं मिली।" वे स्पष्टीकरण देते हुए कहते, "वह अब स्वयं को एक राजगिरी मज़दूर बनाने के लिए तैयार कर रही है।" वे अपने मुंह के अंदर ही हंसते और इस चुटकुले को हर मिलने वाले को सुनाते। दूसरी तरफ मेरी सीधी सादी माँ अपनी बेटी को पहाड़ की चोटी पर पत्थर ढोते देखकर चिंता के आंसू बहाती।

सितम्बर 1983 के प्रारंभ में नयी दिल्ली में हम आई.एम.एफ. में पहुंचीं। लगभग

पाँच सप्ताह तक सात महिला पर्वतारोहियों को थका देने वाला प्रशिक्षण कार्यक्रम दिया गया। हम अपने उदरीय, पृष्ठीय तथा अन्य चढ़ाई वाली मांसपेशियों को मज़बूत बनाने के लिए घंटों जिम्नेसियम में बिताते। शरीर को मोड़ने और फैलाने वाली तथा एक गति से सांस लेने की अनेक कसरतें करनी होती थीं। काफी देर तक तैरने और जोगिंग करने से हमें अपनी शक्ति बढ़ाने में सहायता मिली और अत्यधिक शारीरिक दबावों के अंतर्गत आक्सीजन के अधिकतम उपयोग के लिए फेफड़ों की कार्य प्रणाली का विकास हुआ।

तभी जनवरी 1984 की कड़कती सर्दियों में, ले०क० प्रेम चन्द जो एक सख्त किस्म के प्रशिक्षक थे, हम सब महिलाओं को लेकर गुलमर्ग गये और एक महीने तक उन्होंने हमें गहरे बर्फ से ढकी पहाड़ियों पर चढ़ने और उनके सीधे ढलानों पर से उतरने का अभ्यास कराते रहे।



प्रशिक्षण : बाधाओं को पार करते हुए

ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह को आर्थिक आजादी की मेरी इच्छा की जानकारी थी जिससे कि मैं अपने पर्वतारोहण की अपनी रुचि को आगे बढ़ा सकूं। जून 1983 के ''सात बहनों'' के कार्यक्रम के तुरन्त पश्चात ही उन्होंने जमशेदपुर में ''टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी'' (टिस्को) से सम्पर्क किया और मेरे साहसिक कार्य की उन्नति के लिए मुझे अपने वहां नौकरी देने के लिए उनको सहमत किया। एवरेस्ट दल में ले लिए जाने से मुझे इस कार्य में मदद मिली और मुझे ''स्पोर्टस् असिस्टेंट'' का कार्य मिल गया। इसके बाद मैं इस कंपनी की वेतन सूची में रही और मुझे एवरेस्ट अभियान में भाग लेने के लिए अच्छा खासा दैनिक भत्ता भी मिलता रहा।

मैं अब अभियान और शिखर पर पहुंचने के बारे में ही अपना ध्यान केन्द्रित कर सकती थी।

एवरेस्ट - मेरा प्रथम अभियान

एवरेस्ट अभियान दल 7 मार्च को दिल्ली से काठमाँडू के लिए हवाई जहाज़ से चल दिया। एक मजबूत अग्रिम दल बहुत पहले ही चला गया था जिससे कि वह हमारे ''बैस कैम्प'' पहुंचने से पहले दुर्गम हिमपात के रास्ते को साफ कर सके।

काठमाँडू में कुछ दिन बिताने के पश्चात हम जीरी चले गये जो वहाँ चार पाँच घण्टे की यात्रा पर था। तब हमने नमचे बाजार तक की आठ दिन की यात्रा आराम से की। पर्वतों के स्वभाव के विपरीत, हम रोज़ लगभग एक हज़ार मीटर ऊपर नीचे चढ़ते उतरते, जिससे हममें मज़बूती आई और ऊंचाईयों के वातावरण एवं जलवायु के अनुकूल स्वयं को ढालने में हमें मदद मिली। रास्ते में हमें हंसमुख और मैत्रीपूर्ण व्यवहार के साथ उस क्षेत्र के व्यक्ति, विशेषतः शेरपा मिले।

नमचे बाज़ार, शेरपालैंड का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण नगरीय क्षेत्र है। अधिकांश शेरपा इसी स्थान तथा यहीं के आसपास के गांवों के होते हैं। यह नमचे बाजार ही था, जहाँ से मैंने सर्वप्रथम एवरेस्ट को निहारा जो नेपालियों में ''सागरमाथा'' के नाम से प्रसिद्ध है। मुझे यह नाम अच्छा लगा।

एवरेस्ट की तरफ गौर से देखते हुए, मैंने एक भारी बर्फ का एक बड़ा फूल (प्लूम)देखा जो पर्वत शिखर पर लहराता एक ध्वज सा लग रहा था। मुझे बताया गया कि यह दृश्य शिखर की ऊपरी सतह के आसपास 150 किलोमीटर अथवा इससे भी

अधिक की गति से हवा चलने के कारण बनता था, क्योंकि तेज हवा से सूखा बर्फ पर्वत उड़ता रहता था। बर्फ का यह ध्वज 10 किलोमीटर या इससे भी लंबा हो सकता था। शिखर पर जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को दक्षिण पूर्वी पहाड़ी पर इन तूफानों को झेलना पड़ता था, विशेषकर खराब मौसम में। यह मुझे डराने के लिए काफी था, फिर भी मैं एवरेस्ट के प्रति विचित्र रूप से आकर्षित थी और इसकी कठिनतम चुनौतियों का सामना करना चाहती थी।

हम पर्वतीय लोग सदा से पर्वतों की पूजा करते आये हैं। अतः इस भयमिश्रित प्रेरणास्पद दृश्य के प्रति मेरे ऊपर हावी भावना एक प्रकार से श्रद्धाभाव की थी। मैंने अपने हाथ जोड़े, और सागरमाथा की तरफ श्रद्धा से सर झुकाया।

एक दिन के पश्चात हम प्रसिद्ध थ्यांग बोके मठ पर पहुंचे जहाँ मूर्तिमान थामा ने हमें आशीर्वाद दिया और हमारी सफलता तथा सुरक्षित वापसी के लिए प्रार्थना की। थ्यांग बोके न केवल सुन्दर था वरन् इसकी 4000 मीटर से भी अधिक की ऊंचाई हमारी जलवायु अनुकूलता प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त थी। हम फेरीचा में अपने मुख्य जलवायु-अनुकूलता-प्रशिक्षण-शिविर में जाने से पूर्व यहाँ पर दो दिन रुके।



एवरेस्ट गिरि-पिंड

खतरनाक खुम्भु हिमपात

जब हम 26 मार्च को पैरिच पहुंचे, हमें हिम स्खलन के कारण हुई एक शेरपा कुली की मृत्यु का दुःखद समाचार मिला। खुम्भु हिमपात पर जाने वाले अभियान दल के रास्ते के बाँई तरफ सीधी पहाड़ी के एक धसकन, ल्होला से एक बहुत बड़ी बर्फ की चट्टान नीचे खिसक आई थी। सोलह शेरपा कुलियों के दल में से एक की मृत्यु हो गई थी और चार घायल हो गए थे।

इस समाचार के कारण अभियान दल के सदस्यों के चेहरों पर छाए अवसाद को देखकर, हमारे नेता, कर्नल खुल्लर ने स्पष्ट किया कि एवरेस्ट जैसे महान अभियान में खतरों को और कभी-कभी तो मृत्यु को भी आदमी को सहज भाव से स्वीकार करना चाहिए। ''हमें एक अकेली दुर्घटना से अकारण ही परेशान और विचलित नहीं होना चाहिए।'' उन्होंने कहा।

उपनेता प्रेमचन्द, जो अग्रिम दल का नेतृत्व कर रहे थे, 26 मार्च को पैरिच लौट आए। उन्होंने हमारी पहली बड़ी बाधा खुम्भु हिमपात, की स्थिति से हमें अवगत कराया। उन्होंने कहा कि उनके दल ने कैम्प-I (6000 मी०) जो हिमपात के ठीक ऊपर है, तक का रास्ता साफ कर दिया है। उन्होंने यह भी बताया कि पुल बनाकर रस्सियाँ बाँधकर तथा झंडियों से रास्ता चिन्हित कर सभी बड़ी कठिनाइयों का जायज़ा ले लिया गया है। उन्होंने इस पर भी ध्यान दिलाया कि ग्लेशियर बर्फ की नदी है और बर्फ का गिरना अभी जारी है। हिमपात में अनियमित और अनिश्चित बदलाव के कारण अभी तक के किए गए सभी काम व्यर्थ हो सकते हैं और हमें रास्ता खोलने का काम दोबारा



हिमपात

करना पड़ सकता है। इन बाधाओं से परिचित होने से मेरे अन्दर भय की बजाये जिज्ञासा अधिक प्रबल थी। लेकिन मैंने अपनी भावनाओं को अन्य सभी से छिपा कर रखा।

बेस कैम्प में पहुंचने से पहले हमें एक और मृत्यु की खबर मिली। जलवायु अनुकूल न होने के कारण एक रसोई सहायक की मृत्यु हो गई थी। निश्चित रूप से हम आशाजनक स्थिति में नहीं चल रहे थे।

एक रात के लिए हम गोरखशेप में रुके जहाँ से मैं एक छोटी सी जलवायु-अनुकूलन चढ़ाई के लिए "काला पत्थर" गई। यहाँ से मुझे एवरेस्ट, साउथ कोल, ल्होत्से और हिमपात का दृश्य साफ नज़र आता था। यह एक भय मिश्रित प्रेरणादायक दृश्य था। सागरमाथा दूसरी बार देखने पर मेरी भावना फिर से श्रद्धायुक्त थी। फिर मैंने अपने हाथ जोड़े और अपना सिर झुकाया।

एवरेस्ट शिखर को मैंने पहले दो बार देखा था लेकिन एक दूरी से। बेस कैम्प पहुंचने पर दूसरे दिन मैंने एवरेस्ट पर्वत तथा इसकी अन्य श्रेणियों को देखा। मैं भौंचक्की होकर खड़ी रह गई और एवरेस्ट, ल्होत्से और नुत्से की ऊंचाइयों से घिरी, बर्फीली टेढ़ी मेढ़ी नदी को निहारती रही। हमने देखा कि खुम्भु ग्लेशियर हमारी बांई ओर एवरेस्ट की पश्चिमी श्रृंखला के लगभग सीधी ढलानों और हमारी दाईं ओर नुत्से की श्रृंखला के बीच से बहते हुए, एक किलोमीटर से कम की दूरी में ही, लगभग 600 मीटर नीचे तक चला गया है। ऊंचाई की तीव्र ढाल बर्फ के गिरने का कारण बनी। इसके पीछे का दृश्य विश्व के चौथे सर्वोच्च पर्वत ल्होत्से का किलेनुमा कगूरेदार शिखर था। तेज तूफानी पश्चिमी हवा का सामना करते हुए ल्होत्से पर्वत की चोटी पर बर्फ नहीं ठहर सकता था। इसका चट्टानी ताज इसलिए स्लेटी काले रंग का था।

हिमपात अपने आप में एक तरह से बर्फ के खंडों का अव्यवस्थित ढंग से गिरना ही था। हमें बताया गया कि ग्लेशियर के बहने से अक्सर बर्फ मे हलचल हो जाती थी, जिससे बड़ी-बड़ी बर्फ की चट्टानें तत्काल गिर जाया करती थीं और अन्य कारणों से भी अचानक प्रायः खतरनाक स्थिति धारण कर लेती थी। सीधे धरातल पर दरार पड़ने का विचार और इस दरार का गहरे चौड़े हिम-विदर में बदल जाने का मात्र ख्याल ही बहुत डरावना था। इससे भी ज्यादा भयानक इस बात की जानकारी थी कि हमारे संपूर्ण प्रवास के दौरान हिमपात लगभग एक दर्जन आरोहियों और कुलियों को प्रतिदिन छूता रहेगा।

कैम्प-I (6000 मी०) हिमपात से ऊपर लगाया गया था। "वैस्टर्न कूम" के नाम से



विस्तृत हिम विदर से निकलते हुए

विख्यात हिम विदर युक्त ऊंची घाटी के लगभग 500 मी० ऊपर तक कुछ घंटों की लगातार चढ़ाई के बाद हम कैम्प-II पहुंच गए, जो हमारा अग्रिम बेस था। कैम्प-III (7200 मी०) ल्होत्से के सामने खुले क्षेत्र में था और कैम्प-IV साउथ कोल (7900 मी०) में एवरेस्ट और ल्होत्से के बीच तूफानी, ठंडे और कड़े स्थल पर आखिरी बेस था। लगभग 8500 मीटर पर्वत चोटी तक जाने वाली दक्षिण पूर्वी पहाड़ी पर एक धोलदारी कैम्प लगाना आवश्यक था।

मैं हिमपात के पास पहुंचने के लिए छटपटा रही थी। उसी शाम अन्य साथियों के साथ काँटे के उस स्थान तक पहुंच गई जहाँ से हिमपात शुरू होता था। यह वह स्थान था जहाँ पर पर्वतारोहियों ने अपने जूतों और कोटों के फीते कसे अथवा 10 से 12 कीलों वाले उपकरण पहने जिससे कि पिघलती या जमी हुई बर्फ पर फिसलने से बचा जा सके।

दूसरे दिन नये आने वाले अधिकांश अपने सामान को हिमपात के आधे रास्ते तक ले गए। डा० मीनू मेहता ने हमें अल्मूनियम की सीढ़ियों से अस्थायी पुलों का बनाना, लट्ठों और रस्सियों का उपयोग, बर्फ की आड़ी तिरछी दीवारों पर रस्सियों को बाँधना, और हमारे अग्रिम दल के अभियान्त्रिकी कार्यों के बारे में हमें विस्तृत जानकारी दी।

तीसरा दिन हिमपात से कैम्प-I तक सामान ढो कर चढ़ाई का अभ्यास करने के लिए निश्चित था। रीता गोम्बू तथा मैं साथ-साथ चढ़ रहे थे। हमारे पास एक वॉकी-टॉकी था, जिससे हम अपने हर कदम की जानकारी बेस कैम्प पर दे रहे थे। कर्नल खुल्लर उस समय बहुत खुश हुए जब हमने उन्हें अपने पहुंचने की सूचना दी, क्योंकि कैम्प I पर पहुंचने वाली केवल हम दो हीं थी।

जब हमें उस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति के बारे में बता दिया गया, मैंने देखा कि बलगेरियन अभियान दल का बेस-कैम्प हमारे कैम्प से दूसरा ही था। वे लोग दुर्गम पश्चिमी पहाड़ी के रास्ते से चढ़ रहे थे और शिखर से हमारे रास्ते से लौटकर आने वाले थे। हमें बाद में मालूम हुआ कि पांच बलगेरियन शिखर तक पहुंचे, परन्तु इसके लिए उनको काफी भारी कीमत चुकानी पड़ी। उनके पहले शिखर आरोही, क्रिस्टो प्रोडोनो ने अकेले आक्सीजन रहित चढ़ाई पूरी की। लेकिन उतरते वक्त वह कहीं रास्ते में ही ऊंचाई पर समाप्त हो गया।

रास्तों को खोलने तथा ऊंचे शिविरों के लिए सामान इकट्ठा करने का काम काफी लम्बा और कठिन था। छोटे छोटे समूहों अथवा कभी कभी दो दो के जोड़ों में काम करते

हुए हमने रस्सियों से रास्ता बनाया, पाँव रखने की जगह और हाथ पकड़ने के छेद बनाये। कैम्प-II तथा III ठीक समय पर बन गये। अंग दोरजी, लोपसांग, और मगन बिस्सा अन्ततः साउथ कोल पहुंच गये और 29 अप्रैल को 7900 मीटर पर उन्होंने कैम्प-IV लगाया। यह संतोषजनक प्रगति थी।

जब अप्रैल में मैं बेस कैम्प में थी, तेनजिंग अपनी सबसे छोटी सुपुत्री डेकी के साथ हमारे पास आये थे और उन्होंने इस बात पर विशेष महत्व दिया कि दल के प्रत्येक सदस्य और प्रत्येक शेरपा कुली से बातचीत की जाये। जब मेरी बारी आई, मैंने अपना परिचय यह कह कर दिया कि मैं बिल्कुल ही नौसिखिया हूं और एवरेस्ट मेरा पहला अभियान है। तेनजिंग हँसे और मुझसे कहा कि एवरेस्ट उनके लिए भी पहला अभियान है, लेकिन यह भी स्पष्ट किया कि शिखर पर पहुंचने से पहले उन्हें सात बार एवरेस्ट पर जाना पड़ा था। फिर अपना हाथ मेरे कंधे पर रखते हुए, उन्होंने कहा, "तुम एक पक्की पर्वतीय लड़की लगती हो, तुम्हें तो शिखर पर पहले ही प्रयास में पहुंच जाना चाहिए। ये शब्द ही मेरे साथी बने।

आरोहण योजना की शुरूआत

एक मई तक आरोहण योजना को शुरू करने की पूरी तैयारी हो चुकी थी। साउथ कोल के लिए निर्धारित ऑक्सीजन और अन्य उपकरणों की बीस में से बारह खेप आ चुकी थीं। आवश्यक सामान की खेप लेकर एक बहुत बड़ी तारण की पहले शिखर दल के साथ जाने की आशा थी।

कर्नल खुल्लर ने साउथ कोल तक की चढ़ाई के लिए तीन शिखर दलों की दो पार्टियां बनाकर काफी काम हल्का करने का निश्चय किया। इन दलों को 5 और 6 मई को बेस कैम्प से चलना था। प्रेम चन्द, रीता फू दोरजी, चन्द्रप्रभा और सीरदार अंग दोरजी का पहला दल 7 मई को साउथ कोल पहुंच गया। 8 मई को प्रेम चन्द, रीता और अंग दोरजी का पहला शिखर दल बनना था। उनको शिखर पर पहुंचने का प्रयास करना था, और शाम तक साउथ कोल वापस आना था। उसी दिन (8 मई) फू दोरजी, चन्द्रप्रभा तथा आठ शेरपाओं के दूसरे शिखर दल ने लगभग 8500 मीटर की ऊंचाई पर शिखर कैम्प-IV की स्थापना करनी थी। उनको रात में वहीं रुकना था और दूसरे दिन सुबह चोटी पर चढ़ने का प्रयास कर, शाम तक साउथ कोल लौटना था। तीसरे शिखर दल में एन०डी० शेरपा, लोपसांग, तशारिंग, मगन बिस्सा और मैं साथ थी। और हमें 8 मई को साउथ कोल पहुंचकर 9 मई को चोटी पर पहुंचने का प्रयास करना था। इस महत्वाकांक्षी योजना की सफलता साउथ कोल तथा शिखर कैम्पों के लिए पर्याप्त शेरपाओं के मिलने पर निर्भर करती थी।

लेकिन यह नहीं होना था। निर्धारित आठ की बजाय केवल दो शेरपा ही फू दोरजी

और चन्द्रप्रभा के साथ जा सके। इसलिए प्रेम चन्द ने अपने दल के द्वारा केवल एक ही प्रयास करने का निश्चय किया और शिखर प्रयास के लिए अपना स्थान फू दोरजी को दे दिया। चन्द्रप्रभा उनके साथ साउथ कोल लौट आई। फू दोरजी शिखर कैम्प पर रात बिताने के लिए रीता और अंग दोरजी के साथ शामिल हो गए।

इन तीनों ने 9 मई को प्रातः सात बजे शिखर कैम्प से प्रस्थान किया। एक घंटे की चढ़ाई के उपरान्त अंग दोरजी को लगा कि उनके पैर बहुत ठंडे होते जा रहे हैं। तुषारदंश के डर से उन्होंने वापस लौटने का निश्चय किया। रीता जो उनके साथ गई थी, दुविधा में थी। फू दोरजी लगभग 20 मीटर आगे खड़े इंतजार कर रहे थे कि शायद वह उनके साथ ऊपर चढ़ना चाहे। मौसम की अनिश्चितता (80 कि० मी० प्रति घंटे की रफ्तार से हवा चल रही थी और महीन मेघाच्छादित धुंध छाई हुई थी) के कारण, रीता ने भी लौटने का निश्चय कर लिया।

जब वे अपने लक्ष्य से केवल 200 मीटर ही पीछे थे, फू दोरजी की ऑक्सीजन समाप्त हो गई। लेकिन उनका दृढ़ संकल्प और क्षमता असाधारण थी। अपने उपकरणों को वहीं छोड़कर वे बढ़ते ही गए आर दोपहर के साढ़े बारह बजे वे शिखर पर थे। इस आसाधारण साहसिक उपलब्धि ने भारत के शिखर अभियान दल को एवरेस्ट की पहली ऑक्सीजन रहित चढ़ाई का श्रेय दिया।

हमारे दल ने 8 मई को कैम्प-III से साउथ कोल तक अविरल प्रगति की। मैं गैस की कमी के कारण ऑक्सीजन के बगैर ही चढ़ाई कर रही थी। जब साउथ कोल पहुंचने के लिए मेरा एक घंटे का सफर बाकी था, मुझे चलने में भारीपन महसूस होने लगा और मेरी चाल मंद पड़ गई थी। विशेषकर इसलिए भी क्योंकि यह चढाई का सबसे अधिक ढलाऊ हिस्सा था और बर्फीली हवा चलनी शुरू हो गई थी। तभी मैंने जनेवा स्पर के साथ किसी को नीचे आते देखा और आश्चर्य किया कि इतनी देर गए साउथ कोल से कौन नीचे जा रहा है। ये एन०डी० शेरपा थे, जो मेरे लिए ऑक्सीजन का सिलेंडर लेकर आ रहे थे। मैं इस सौहार्दपूर्ण कार्य से अत्यधिक द्रवित हो उठी। ऑक्सीजन मिलने से चढ़ाई बहुत आसान हो गई।

इस दौरान बल्गेरिया का पहला जोड़ा जिन्होंने पश्चिमी पहाड़ी के रास्ते से शिखर की चढ़ाई की थी, साउथ कोल के रास्ते से चढ़ाई पूरी करने में 24 घंटे से भी अधिक पीछे था। शिखर से लौटते समय फू दोरजी ने उस थके हुए बलगेरियन जोड़े की मदद की और

हमारे नेता ने 9 मई की अपने दल की यात्रा रद्द कर दी जिससे कि एन०डी० और लोपसांग को उस दल के बचाव कार्य में लगाया जा सके। इसलिए दल के हम बाकी लोग कैम्प-II में वापस आ गए।



साउथ कोल : कैम्प-IV

एक भाग्यवान रात

15-16 मई 1984 को बुद्ध पूर्णिमा के दिन मैं ल्होत्से की बर्फीली सीधी ढलान पर लगाये गये सुंदर रंगीन नाइलोन के बने तम्बू के कैम्प-III में थी। कैम्प में 10 और व्यक्ति थे। लोपसांग, तशारिंग मेरे तम्बू में थे, एन०डी० शेरपा तथा आठ अन्य शरीर से मजबूत और उंचाइयों में रहने वाले शेरपा दूसरे तम्बुओं में थे। मैं गहरी नींद में सोई हुई थी कि रात में 12-30 बजे के लगभग मेरे सिर के पिछले हिस्से में एक किसी सख्त चीज के टकराने से मेरी नींद अचानक खुली और साथ ही एक ज़ोरदार धमाका भी हुआ। तभी मुझे महसूस हुआ कि एक ठंडी बहुत भारी कोई चीज मेरे शरीर पर से मुझे कुचलती हुई चल रही है। मुझे साँस लेने में भी कठिनाई हो रही थी।

यह क्या हो गया था? एक लम्बा बर्फ का पिंड हमारे कैम्प के ठीक ऊपर ल्होत्से ग्लेशियर से टूट कर नीचे आ गिरा था और उसका विशाल हिम पुंज बना गया था। हिम खंडों, बर्फ के टुकड़ों, तथा जमी हुई बर्फ के इस विशालकाय पुंज ने, एक एक्सप्रेस रेलगाड़ी की तेज गति और भीषण गर्जना के साथ, सीधी ढलान से नीचे आते हुए, हमारे कैम्प को तहस नहस कर दिया। वास्तव में हर व्यक्ति को चोट लगी थी। यह एक आश्चर्य था कि किसी की मृत्यु नहीं हुई थी।

लोपसांग अपनी स्विस छुरी की मदद से हमारे तम्बू का रास्ता साफ करने में सफल हो गये थे और तुरन्त ही अत्यंत तेजी से मुझे बचाने की कोशिश में लग गये। थोड़ी सी भी देर का सीधा अर्थ था मृत्यु। बड़े बड़े हिमपिंडों को मुश्किल से हटाते हुए उन्होंने मेरे चारों तरफ के कड़े जमे बर्फ की खुदाई की और मुझे उस बर्फ की कब्र से बाहर खींच लाने में सफल हो गये।

रसोई के अतिरिक्त कोई भी तम्बू अपनी स्थिति में खड़ा नहीं था। लोपसांग और मैं रसोई के ऊपर किसी तरह से चढ़े और हमने देखा कि एन०डी० कैम्प-II के नेता से वॉकी-टॉकी पर बात कर रहे थे। एन०डी० ने बताया कि उनकी कुछ पसलियां टूट गई हैं। एक शेरपा की टांग की हड्डी टूट गई थी और बाकी सब को चोटें आई थीं। दर्द की कराहट और मदद के लिए चिल्लाहट सभी तरफ से सुनाई दे रही थी। लेकिन एन०डी० ने कैम्प-II के नेता को आश्वस्त किया कि सभी कुछ समाप्त नहीं हुआ है। अभियान दल में अभी आगे बढ़ने में काफी दमखम है।

अब तक हम में से काफी लोग रसोई के तम्बू के पास एकत्र हो गये थे। मैंने अपने प्राथमिक चिकित्सा के थैले में से सभी को दर्दनाशक गोलियां दीं और गर्म पेय बनाया। मैं किसी की मदद कर सकती थी—इस विचार से ही मेरे ऊपर से निराशा और अवसाद के बादल छंट गये।

नेता ने शीघ्र ही सुरक्षा दल भेजने का वायदा किया। की, जय और बिस्सा, कैम्प-I पर अपनी वॉकी टॉकी पर हमारी बातचीत सुनकर तुरन्त ही रवाना हो गये, यद्यपि अभी

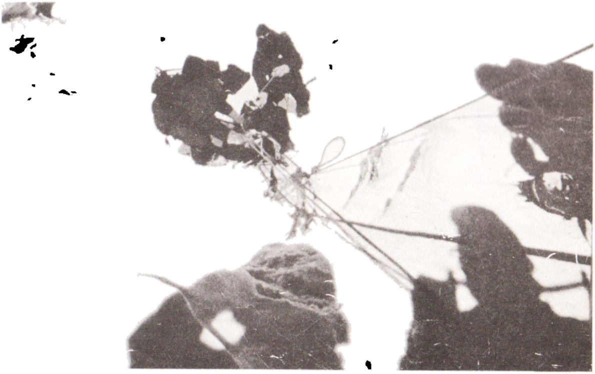


हिम स्खलन के बाद कैम्प-III की स्थिति

भी रात थी। कैम्प-II से भी चार आदमियों का सुरक्षा दल और कैम्प-II का रसोइया सक्रिय हो गया।

तड़का होने से पूर्व ही हमने अपने उपकरण निकालने शुरू कर दिये। मुझे देवी दुर्गा के उस चित्र की बहुत अधिक चिंता थी जो मेरे थैले में था। प्रत्येक सुबह शाम मैं इसे निकालती थी और इसी से शक्ति और प्रेरणा ग्रहण करती थी। थैला मिलते ही मेरा पहला काम उसकी साइड की जेब में हाथ डालना था। मेरी उंगलियां बर्फ से ठंडे हुए धातु से बने उस चित्र से जब टकराईं तो मुझे काफी राहत मिली। मैंने उस पवित्र चित्र को कस कर पकड़ा और अपने माथे से लगाया। मुझे लगा कि मुझे सब कुछ मिल गया था। मेरे हाथों मे शक्ति थी। शक्ति, जिसने कुछ घंटों पूर्व मेरे जीवन की रक्षा की थी और वही शक्ति, मुझे विश्वास था कि अब आगे ही आगे ले जायेगी। रात के अनुभव से मेरा सारा डर अब निकल गया था।

तभी सारे सुरक्षा दल आ गये थे और 16 मई के प्रातः 8 बजे तक हम प्रायः सभी कैम्प-II पर पहुंच गये थे। जिस शेरपा की टांग की हड्डी टूट गई थी, उसे एक खुद के



घायल साथी को बचाते हुये

बनाये स्ट्रेचर पर लिटा कर नीचे लाये। हमारे नेता खुल्लर के शब्दों में, ''यह इतनी ऊंचाई पर सुरक्षा कार्य का एक जबर्दस्त साहसिक कार्य था।''

मेरे सिर के पिछले हिस्से में बने गूमड़े में अब दर्द होने लगा था। मुझे काफी तकलीफ महसूस हो रही थी, परन्तु मैंने स्वयं को सन्तुलित कर रखा था, कभी कभी अपनी हथेली से उस गूमड़े को दबाती रहती थी।

सभी नौ पुरुष सदस्यों को चोटों अथवा टूटी हड्डियों आदि के कारण बेस कैम्प में भेजना पड़ा। तभी कर्नल खुल्लर मेरी तरफ मुड़ कर कहने लगे, ''क्या तुम भयभीत थीं?''

''जी हां''

''क्या तुम वापिस जाना चाहोगी?''

''नहीं''—मैंने बिना किसी हिचकिचाहट के उत्तर दिया।



ऊँचाई पर आक्सीजन मुखौटा लगाकर सोते हुए

रहस्यपूर्ण नाटक

की कुमार, जय बहुगुणा, मगन बिस्सा और डा० मीनू मेहता को मिलाकर अगला शिखर दल बनना था। महत्वपूर्ण महिला प्रतिभागी होने के नाते मुझे विशेष अधिकार दिया था। ल्हाटू, पुलजर और सभी उपलब्ध उच्च स्थानवासी शेरपाओं को सहायकों की भूमिका निभानी थी। अपने साधनों को देखते हुए, सहायक दल को प्रथम शिविर दल के उपरान्त ही प्रयत्न करना था और दूसरे दल में किसी महिला को नहीं लेना था।

अन्तिम चढ़ाई के लिए ऑक्सीजन संरक्षित करने की दृष्टि से सभी पुरुष सदस्यों को साउथ कोल तक बिना ऑकसीजन के जाना था। लेकिन, जब बिस्सा के पैर आधी चढ़ाई के बाद ही ठंडे पड़ गये, उसे ऑक्सीजन लेने की सलाह दी गई। मुझे अगले दिन की अंतिम चढ़ाई के लिए उर्जा संरक्षित करने की दृष्टि से दो लीटर प्रति मिनट के औसत से ऑक्सीजन लेने को कहा गया। साउथ कोल पहुंचने पर और चढ़ाई के दिन मेरी स्वस्थता को देखते हुए यह सिद्ध हो गया कि यह निर्णय बुद्धिमत्तापूर्ण ही था।

जैसे ही मैं साउथ कोल कैम्प पहुंची, मैंने अगले दिन की अपनी महत्वपूर्ण चढ़ाई की तैयारी शुरू कर दी। मैंने खाना, कुकिंग गैस, तथा कुछ ऑक्सीजन सिलिंडर इकट्ठे किये। जब दोपहर डेढ़ बजे बिस्सा आया, उसने मुझे चाय के लिए पानी गर्म करते देखा। की, जय और मीनू अभी बहुत पीछे थे। मैं चिन्तित थी क्योंकि मुझे अगले दिन उनके साथ ही चढ़ाई करनी थी। वे धीरे धीरे आ रहे थे क्योंकि वे भारी बोझ लेकर और बिना ऑक्सीजन के चल रहे थे।

दोपहर बाद मैंने अपने दल के दूसरे सदस्यों की मदद करने और अपने एक थरमस को जूस से और दूसरे को गरम चाय से भरने के लिए नीचे जाने का निश्चय किया। मैंने बर्फीली हवा में ही तम्बू से बाहर कदम रखा।

जैसे ही मैं कैम्प क्षेत्र से बाहर आ रही थी मेरी मुलाकात मीनू से हुई। की और जय अभी कुछ दूर पीछे थे। मुझे जय जेनेवा स्पर की चोटी के ठीक नीचे मिला। उसने कृतज्ञता पूर्वक चाय वगैरह पी लेकिन मुझे और आगे जाने से रोकने की कोशिश की। लेकिन मुझे की से भी मिलना था। थोड़ा सा और आगे नीचे उतरने पर मैंने की को देखा। वह मुझे देखकर हक्का-बक्का रह गया। "तुमने इतनी बड़ी जोखिम क्यों ली, बचेन्द्री?" मैंने उसे दृढ़तापूर्वक कहा कि "मैं भी औरों की तरह एक पर्वतारोही हूं। इसीलिए इस दल में आई हूं। शारीरिक रूप से मैं ठीक हूं, इसलिए मुझे अपने दल के सदस्यों की मदद क्यों नहीं करनी चाहिए।" की, हँसा और उसने पेय पदार्थ से प्यास बुझाई। लेकिन उसने मुझे अपना किट ले जाने नहीं दिया।

थोड़ी देर बाद साउथ कोल कैम्प से ल्हाटू और बिस्सा हमें मिलने नीचे उतर आए। और हम सब साउथ कोल पर जैसी भी सुरक्षा और आराम की जगह उपलब्ध थी, उस पर लौट आए। साउथ कोल "पृथ्वी पर बहुत अधिक कठोर" जगह के नाम से प्रसिद्ध है।



खाना गर्म करते हुए

एवरेस्ट के साथ मेरी भेंट

मैं सुबह चार बजे उठ गई, बर्फ पिघलाया और चाय बनाई। कुछ बिस्कुट और आधी चॉकलेट का हल्का नाश्ता करने के बाद मैं लगभग साढ़े पाँच बजे अपने तम्बू से निकल पड़ी। अंग दोरजी बाहर खड़ा था। और कोई आसपास नहीं था।

अंग दोरजी बिना ऑक्सीजन के ही चढ़ाई करने वाला था। लेकिन इसके कारण, उसके पैर ठंडे पड़ जाते थे। इसलिए वह ऊंचाई पर लम्बे समय तक खुले में और रात्रि में शिखर कैम्प पर नहीं जाना चाहता था। इसलिए उसे या तो उसी दिन चोटी तक चढ़कर साउथ कोल पर वापस आ जाना था अथवा अपने प्रयास को छोड़ देना पड़ता था।

वह तुरंत ही चढ़ाई शुरू करना चाहता था। और उसने मुझसे पूछा क्या मैं उसके साथ जाना चाहूंगी? एक ही दिन में साउथ कोल में चोटी तक जाना और वापस आना बहुत कठिन और श्रमसाध्य होगा। इसके अलावा यदि अंग दोरजी के पैर ठंडे पड़ गये तो उसके लौट कर आने का भी जोखिम था। मुझे फिर भी अंग दोरजी पर विश्वास था और साथ साथ मैं अपनी आरोहण की क्षमता और कर्मठता के बारे में भी आश्वस्त थी। अन्य कोई भी व्यक्ति इस समय साथ चलने के लिए तैयार नहीं था।

सुबह 6.20 पर जब अंग दोरजी और मैं साउथ कोल से बाहर निकले तो दिन ऊपर चढ़ आया था। हल्की हल्की हवा चल रही थी लेकिन ठंड भी बहुत अधिक थी। मैं अपने आरोही उपस्कर में काफी सुरक्षित और गर्म थी। हमने बगैर रस्सी के ही चढ़ाई की। अंग

दोरजी एक निश्चित गति से ऊपर चढ़ते गए और मुझे भी उनके साथ चलने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

जमें हुए बर्फ की सीधी व ढलाऊ चट्टानें इतनी सख्त और भुरभुरी थीं मानों शीशे की चादरें बिछी हों। हमें बर्फ काटने के फावड़े का इस्तेमाल करना पड़ा और मुझे इतनी सख्ती से फावड़ा चलाना पड़ा जिससे कि उस जमें हुए बर्फ की धरती को फावड़े के दांते काट सकें। मैंने उन खतरनाक स्थलों पर हर कदम अच्छी तरह सोच समझ कर उठाया।

दो घंटे से कम समय में ही हम शिखर कैम्प पर पहुंच गए। अंग दोरजी ने पीछे मुड़कर देखा और मुझसे कहा कि क्या मैं थक गई हूं। मैंने जवाब दिया, "नहीं", जिसे सुनकर वे बहुत अधिक आश्चर्यचकित और आनंदित हुए। उन्होंने कहा कि पहले वाले दल ने शिखर कैम्प पर पहुंचने में चार घंटे लगाए थे और यदि हम इसी गति से चलते रहे तो हम शिखर पर दोपहर एक बजे तक पहुंच जाएंगे।

ल्हाटू हमारे पीछे पीछे आ रहा था और जब हम दक्षिणी शिखर के नीचे आराम कर रहे थे वह हमारे पास पहुंच गया। थोड़ी थोड़ी चाय पीने के बाद हमने फिर चढ़ाई शुरू की। ल्हाटू एक नायलौन की रस्सी लाया था, इसलिए अंग दोरजी और मैं रस्सी के सहारे चढ़े, जबकि ल्हाटू एक हाथ से रस्सी पकड़े हुए बीच में चला। उसने रस्सी अपनी सुरक्षा की बजाय हमारे संतुलन के लिए पकड़ी हुई थी। ल्हाटू ने ध्यान दिया कि मैं इन ऊंचाइयों के लिए सामान्यत: आवश्यक, चार लीटर ऑक्सीजन की अपेक्षा, लगभग ढाई लीटर ऑक्सीजन प्रति मिनट की दर से लेकर चढ़ रही थी। मेरे रेगुलेटर पर जैसे ही उसने ऑक्सीजन की आपूर्ति बढ़ाई मुझे महसूस हुआ कि सपाट और कठिन चढ़ाई भी अब आसान लग रही थी।

दक्षिणी शिखर के ऊपर हवा की गति बढ़ गई थी। उस ऊंचाई पर तेज हवा के झौंके भुरभुरे बर्फ के कणों को चारों तरफ उड़ा रहे थे जिससे दृश्यता शून्य तक आ गई थी। अनेक बार देखा कि केवल थोड़ी दूर के बाद कोई ऊंची चढ़ाई नहीं है। ढलान एक दम सीधा नीचे चला गया है।

मेरी सांस मानो रुक गई थी। मुझे विचार कौंधा कि सफलता बहुत नजदीक है। 23 मई 1984 के दिन दोपहर के एक बज कर सात मिनट पर मैं एवरेस्ट की चोटी पर खड़ी थी। एवरेस्ट की चोटी पर पहुंचने वाली मैं प्रथम भारतीय महिला थी।



शिखर पर

सागरमाथा के प्रति श्रद्धाभाव

एवरेस्ट शंकु की चोटी पर इतनी जगह नहीं थी कि दो व्यक्ति साथ साथ खड़े हो सकें। चारों तरफ हज़ारों मीटर लम्बी सीधी ढलान को देखते हुए हमारे सामने प्रश्न सुरक्षा का था। हमने पहले बर्फ के फावड़े से बर्फ की खुदाई कर अपने आप को सुरक्षित रूप से स्थिर किया। इसके बाद, मैं अपने घुटनों के बल बैठी, बर्फ पर अपने माथे को लगाकर मैंने सागरमाथे के ताज का चुम्बन लिया। बिना उठे ही मैंने अपने थैले से दुर्गा मां का चित्र और हनुमान चालीसा निकाला। मैंने इनको अपने साथ लाये लाल कपड़े में लपेटा, छोटी सी पूजा अर्चना की और इनको बर्फ में दबा दिया। आनंद के इस क्षण में मुझे अपने माता पिता का ध्यान आया।

जैसे मैं उठी, मैंने अपने हाथ जोड़े और मैं अपने रज्जु-नेता अंग दोरजी के प्रति आदर भाव से झुकी। अंग दोरजी जिन्होंने मुझे प्रोत्साहित किया और मुझे लक्ष्य तक पहुंचाया मैंने उन्हें बिना ऑक्सीजन के एवरेस्ट की दूसरी चढ़ाई चढ़ने पर बधाई भी दी। उन्होंने मुझे गले से लगाया और मेरे कानों में फुसफुसाया-''दीदी, तुमने अच्छी चढ़ाई की, मैं बहुत प्रसन्न हूं।''

कुछ देर बाद सोनम पुलजर पहुंचे और उन्होंने फोटो लेने शुरू कर दिये।

इस समय तक ल्हाटू ने हमारे नेता को ''एवरेस्ट पर हम चारों'' के होने की सूचना दे दी थी। तब मेरे हाथ में वॉकी-टॉकी दिया गया। कर्नल खुल्लर हमारी सफलता से बहुत प्रसन्न थे। मुझे बधाई देते हुए उन्होंने कहा, ''मैं तुम्हारी इस अनूठी उपलब्धि के लिए तुम्हारे माता-पिता को भी बधाई देना चाहूँगा।'' वे बोले कि देश को तुम पर गर्व है और

अब तुम ऐसे संसार में वापिस जाओगी जो तुम्हारे अपने पीछे छोड़े हुए संसार से एक दम भिन्न होगा।

हम सब आरोही एक दूसरे के गले मिले और आपस में एक दूसरे की पीठ थपथपाई। नेपाल का एन.ए.एफ. "सात बहनों का", टिस्को का, तथा मेरे कारण भारत का ध्वज, लहराया गया और फोटो लिए गये।

हमने शिखर पर 43 मिनट व्यतीत किये। ल्होत्से, नुपत्से और नकालू जैसी विशाल पर्वत श्रेणियां अब इस हमारे पर्वत के सामने बौने लग रहे थे। मैंने चोटी के समीप एक छोटे से खुले स्थान से पत्थरों के कुछ नमूने एकत्र किये।

हमने अपनी वापसी यात्रा 1.55 (एक बजकर 55 मिनट पर) आरम्भ की। मैं जानती



दक्षिण पूर्वी चोटी पर अंग दोरजी और ल्हाटू के साथ

थी कि मुझे अपनी वापसी यात्रा में विशेष रूप से सावधान रहना पड़ेगा क्योंकि चढ़ाई की अपेक्षा उतराई पर अधिक दुर्घटनाएं होती हैं। लेकिन मैं एक मूलभूत खतरे से अनजान थी। मैंने बर्फ रहित काले पथरीले स्थान पर अपना बर्फ से बचाव वाला चश्मा उतार लिया था। मैंने सोचा था कि बर्फ-अन्धता केवल, सूर्य किरणों के बर्फ पर पड़ते प्रतिबिम्ब की चकाचौंध से होती है। इसके अतिरिक्त वातावरण भी धुंधला था। वास्तव में बर्फ-अंधता अधिक ऊंचाइयों पर आती तेज परा-गैंगनी किरणों के कारण होती हैं और बर्फ अथवा इसकी चकाचौंध से इसका कोई संबंध नहीं है।

मुझे अपनी अज्ञानता की भारी कीमत चुकानी पड़ी। मेरी दोनों आंखों पर इसका दुष्प्रभाव पड़ा और मैं अत्यधिक दर्द से पीड़ित रही। कैम्प पर लौटते ही मुझे नींद की एक गोली लेनी पड़ी। मेरे एवरेस्ट प्रवास के दौरान यह मेरे पास अकेली गोली थी।

यद्यपि अंग दोरजी तेज़ चल रहे थे, मुझे लगा कि मैं अपनी उतराई में एक निश्चित गति से विश्वस्त कदमों से उतर रही थी—यहां तक कि अनुभवी शेरपा की गति से आ रही थी। जब हम साउथ कोल से कुछ ही दूरी पर थे, आश्चर्यपूर्वक मैंने मगन बिस्सा को ऊपर आते देखा। सायंकाल के समय खुली दक्षिण पूर्वी पहाड़ी पर चढ़ना खतरनाक था जबकि ऊंचाई और वातावरण के सामान्य खतरों के अतिरिक्त तापमान भी तेजी से गिरता जा रहा था। बिस्सा का थैला ऑक्सीजन सिलिंडरों और थर्मस फ्लास्कों से भरा था। उसने हमें बधाई दी और पीने के लिए कुछ गर्म पेय और जूस दिया।

वह ल्हाटू और पुलज़र की मदद के लिए भी गया और उन्हें भी गर्म पेय दिया। पुलज़र के पास कोई ऑक्सीजन मुखौटा नहीं था अतः बिस्सा ने उसे अपना मुखौटा दे दिया। ल्हाटू साउथ कोल पर सायं 6.00 बजे तक पहुंचा जबकि बिस्सा पुलज़र को अपनी रस्सी से सायं 7.00 बजे तक सुरक्षात्मक स्थिति में ले आया।

अंग दोरजी और मैं साउथ कोल पर सायं 5.00 बजे तक पहुंच गये। सभी ने हमें साउथ कोल से शिखर तक और वापिस साउथ कोल की यात्रा चोटी के हाल्ट सहित 10 घंटे 40 मिनट के समय में पूरी करने पर बधाई दी।

जैसे मैं अपने तम्बू में घुस रही थी, मैंने मेजर की कुमार को कर्नल खुल्लर से वायर लैस पर बात करते सुना। "आप विश्वास करें या न करें, श्रीमान, "वे उत्तेजना में बोल रहे थे," बचेन्द्री केवल तीन घंटे में ही वापिस आ गई है। और वह उतनी ही चुस्त दिख रही है जितनी वह आज सुबह चढ़ाई शुरू करने से पहले थी।"



चढ़ाई के बाद : साउथ कोल वापस आते हुए

यश की यंत्रणा

एवरेस्ट से लौटने के बाद के महीने मेरे लिए घबराहट के थे। लेकिन दिल्ली में पहला हफ्ता पूर्णतया कष्टदायक था। मेरी 18 घंटे की अथवा पूरे दिन भर की कार्य सूची भरी पूरी था। मेरी अति विशिष्ट व्यक्तियों से भेंट कराई गई; प्रेस—कान्फ्रेस, भाषण, अभिवादन और साक्षात्कार हुए।

मुझे पर्वतारोहण में श्रेष्ठता के लिए, भारतीय पर्वतारोहण संघ (आई०एम०एफ०) का प्रतिष्ठित स्वर्ण पदक तथा अन्य अनेक सम्मान और पुरस्कार प्रदान किए गए जो मैं याद भी नहीं रख सकती। पद्मश्री और प्रतिष्ठित अर्जुन पुरस्कार की घोषणा की गई। इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि वे सब समारोह और झंझट अहं तुष्टि प्रदान करते थे, लेकिन शरीर और धैर्य के लिए बहुत अधिक कष्टसाध्य थे। मैं बाधा रहित 24 घंटे की नींद के लिए कुछ भी देने को तैयार थी।

मैं यह नही कहती कि सबके आकर्षण और सम्मान का केन्द्र होना मुझे अच्छा नहीं लगा परन्तु मेरी सर्वाधिक हार्दिक इच्छा अपने माता-पिता बहनों और भाइयों के साथ होने तथा मेरे अपने गांव नकुरी के मित्रों से मिलने की थी।

मैं उस उमस भरे जून के दिन दिल्ली से चल पड़ी और आठ घंटे की यात्रा के बाद ऋषिकेश पहुंची। जैसे ही कार पहाड़ी की सड़क पर चढ़ने लगी, वर्षा शुरू हो गई, लेकिन भारी वर्षा के बावजूद, सड़क पर बसे गांवों से आये आदमी, औरतें और बच्चे अपनी उस बेटी का स्वागत करने के लिए इकट्ठे हो रहे थे— जिसने उनके अनुसार, गढ़वाल और भारत को गौरव प्रदान किया था। उन्होंने जल्दी जल्दी में स्वागत द्वार भी

बनाये थे। मैं अपने निश्चित समय से बहुत पीछे चल रही थी, क्योंकि मुझे उनकी बधाई स्वीकार करने के लिए रुकना पड़ता था। और जब तक मैं ज़िले की सीमा तक पहुंची, वहां पर विशाल जनसमूह काफी समय से मेरा अभिवादन करने के लिए इन्तजार कर रहा था। रात के 9.00 बजे गाड़ी मेरे गांव पहुंची। वर्षा के बावजूद, जैसे पूरा गांव मेरे स्वागत के लिए उमड़ पड़ा था। ढोल बाजे बजाते, शंख नाद करते, मंत्रोच्चारण करते, बतियाते और हल्ला करते हुए उन्होंने मुझ पर स्नेह वर्षा की और हर व्यक्ति मुझे माला पहनाना चाहता था।

जैसे जैसे में हंसती गाती भीड़ को चीरती हुई आगे बढ़ रही थी, मेरी आंखे दो चेहरों को ढूंढ रही थी। अचानक मैंने उन्हें देखा। मेरे माता-पिता एक झोंपडी के बाहर शान्त खड़े थे। वे बहुत अधिक रोमांचित दिखाई दे रहे थे।

मैं दौड़कर अपनी मां के पास गई और उसकी बाँहों में गिर पड़ीं। मां बेटी एक दूसरे की बाँहों में थीं और खुशी में रो रही थी। मैंने अपनी मां के कंधे के ऊपर से देखा और मुझे आनन्द में रोते हुए अपने पिता की भी धुंधली छाया नजर आई। वे मुझे अविश्वसनीय से देख रहे थे।

सपने साकार हुए

11 जुलाई को मैंने टिस्को के अध्यक्ष श्री मोदी को, टिस्को का वह ध्वज प्रदान किया जो मैंने एवरेस्ट की चोटी पर फहराया था। मि० मोदी ने मेरी पदोन्नति मैनेजर, एडवेंचर प्रोग्राम के पद पर घोषित की और कहा कि मुझे "टाटा यूथ एडवेंचर सेंटर" की प्रमुख बनकर जमशेदपुर में सभी– साहसिक गतिविधियों की एक मात्र इन्चार्ज बनना है। वास्तव में साहस और खेलकूद के काम में मि० मोदी के प्रोत्साहन और मदद से ही मेरे जैसे अनेक व्यक्तियों के लिए अपनी अपनी रुचि के क्षेत्र में कार्य करना और उसमें श्रेष्ठता हासिल करना संभव हो सका।

यह कम लोगों के भाग्य में ही होता है कि उनके स्वप्न सच हो जायें। मुझे न केवल मैं जो चाहती थी वह सब कुछ मिला वरन् मेरी अभीष्ट इच्छा से कहीं अधिक मिला। पर्वतारोहण तो मेरे रक्त में था। एवरेस्ट से तीन वर्ष पूर्व, मैंने अपने परिचत आरोहियों से अधिक आरोहण कर लिया था। इसके बाद 1984 में इस महान चोटी एवरेस्ट पर मेरा प्रथम आरोहण अभियान। 1986 में मैंने यूरोप के सर्वोच्च पर्वत मोन्ट ब्लाक की चढ़ाई की तथा चार अल्पाइन देशों में भी आधुनिकतम तकनीकों और विचारों के विशेषज्ञों के साथ चढ़ाई की।

लेकिन मुझे बच्चों के साथ रहना पसन्द है। अब मुझे युवाओं को साहस के काम शिविर लगाना, चढ़ाई करना, शैल आरोहण, नदी पार करना, उन्मुक्त प्रकृति से उन्हें अवगत कराना आदि सिखाने के लिए अच्छा वेतन मिलता है। मैं अपने कार्यक्रम में लड़कियों की तरफ विशेष ध्यान देती हूं क्योंकि मैं महसूस करती हूं कि भारत में हम उनकी उपेक्षा करते हैं और उन्हें बाहरी कामों के लिए निरुत्साहित करते हैं। जोखिम से

प्यार करना और खतरों मे खेलना जीवन में लड़कियों के लिए भी उतना ही जरूरी है जितना लड़कों के लिए, क्योंकि इससे उनमें साहस, निर्भीकता, और पहल शक्ति आती है।

मैं अनेक महत्वपूर्ण व्यक्तियों से मिली हूं। इनमें जिन दो व्यक्तियों ने मुझे सर्वाधिक प्रेरणा दी है वे हैं इंदिरा गांधी और शेरपा तेनजिंग नोर्गे। एवरेस्ट चढ़ाई के बाद जब मैं श्रीमती गांधी से मिली, उन्होंने कहा, ''हमें देश में सैकड़ों बचेन्द्रियों की आवश्यकता



आस्ट्रीया में चट्टान पर चढ़ाई

है।" और उन्होंने मुझसे ग्रामीण लड़कियों तक पहुंचने के लिए कहा।

मैं तेनजिंग से पिछली बार दिसम्बर 1985 में मिली थी। उन्होंने मुझे बताया कि बचेन्द्री का संबंध अपने आप से नहीं है। अब मेरी रुचि, मेरे समय और मेरी मुस्कराहटों पर हर व्यक्ति का अधिकार है। उनका कहना था कि एवरेस्ट पर चढ़ने और प्रसिद्धि प्राप्त करने के अपने प्रतिफल हैं लेकिन इसकी कुछ जिम्मेदारियां भी हैं।

एवरेस्ट चढ़ाई से मेरी हार्दिक इच्छाओं की पूर्ति हुई है और मुझे सभी कुछ मिला है जो मेरे पास है मैं इससे अधिक कुछ नहीं चाहती।

श्रीमती इंदिरा गांधी के साथ

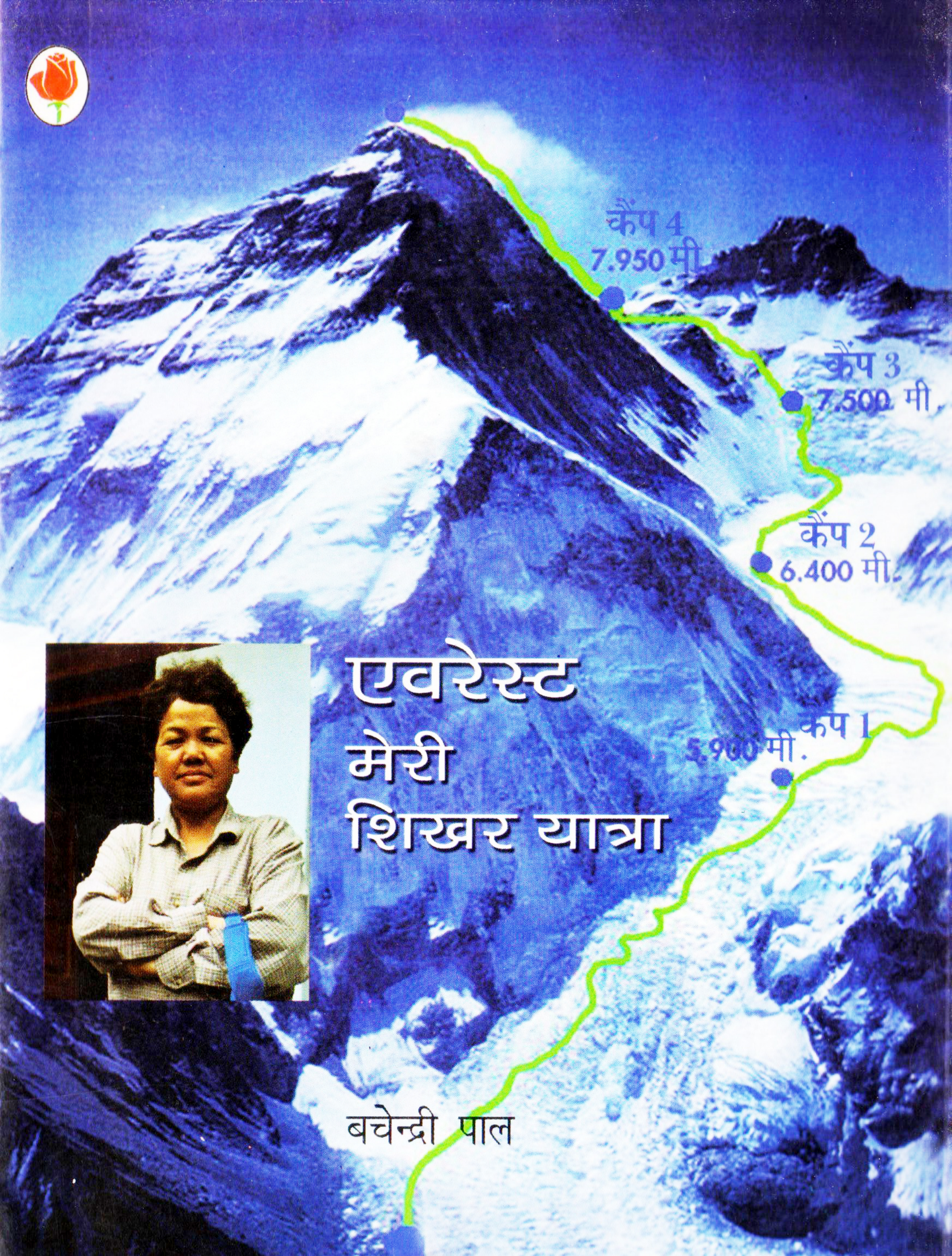


Printed at Print Process, New Delhi

₹ 18.00 ISBN 978-81-237-0929-1

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया





एवरेस्ट मेरी शिखर यात्रा

बचेन्द्री पाल

ISBN 978-81-237-0929-1
पहला संस्करण : 1990
पंद्रहवीं आवृत्ति : 2011 *(शक 1932)*

छाया चित्र : ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह एवं पृष्ठ 31 के चित्र संजीव सेठ के सौजन्य से।
Everest, My Journey to the Top *(English)*
Everest Meri Shikhar Yatra *(Hindi)*
₹ **18.00**
निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
नेहरू भवन, 5 इंस्टीट्यूशनल एरिया, फेज-II, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070 द्वारा प्रकाशित

नेहरू बाल पुस्तकालय

एवरेस्ट
मेरी शिखर यात्रा

लेखक

बचेन्द्री पाल

सहयोग

ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह

अनुवाद

बी०एन० गोयल



नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया



परिवार-वंशावली

मेरे पिता का नाम किशन सिंह पाल है। उनका जन्म एक छोटे से पहाड़ी गांव बम्पा में 1901 में हुआ था। यह गांव सीमावर्ती जिले चमोली का एक भाग है। कलकल करती और उछलती कूदती धोली गंगा नदी के दोनों और बसा है। मेरे पिता का कद नाटा और गठीला है। अपने इलाके के अधिकांश व्यक्तियों तथा अपने पिता की तरह मेरे पिता एक छोटे सीमावर्ती व्यापारी थे। हमारे क्षेत्र में सड़कें नहीं थीं, इसलिए वो अपना सामान ले जाने के लिए खच्चरों, घोड़ों और यहां तक कि बकरियों का भी इस्तेमाल करते थे। वे भारत से तिब्बत आटा, चावल, जौ और मिसरी ले जाते थे। तिब्बत में या तो वे इन चीजों को बेचते थे अथवा इनके बदले में ऊन, खनिज लवण विशेषकर काला नमक, बकरियां और भेड़े लाते थे।

मेरे पिता व्यापार में अधिक सफल नहीं रहे। उन्होंने 35 साल की आयु में नया काम करने का निश्चय किया। उन्होंने बम्पा गांव को छोड़कर नकुरी गांव में अपना नया घर बसाया। यह पंद्रह घरों का छोटा सा गांव था जो उत्तरकाशी से 12 किलोमीटर दक्षिण में भागीरथी गंगा के दायें किनारे पर बसा हुआ था। किशन सिंह ने हंसा देई नेगी नाम की लड़की से शादी की थी। अट्ठारह वर्षीय हंसा अपने पति से आयु में आधी थी। यद्यपि बहुत से मामलों में वे एक दूसरे से अलग थे, फिर भी उनमें काफी अच्छी निभती थी। ठिगने और मजबूत काठी के किशन सिंह मिज़ाज के सख्त और गर्म थे। जबकि हंसा देई कोमलांगी, नाजुक और अन्य गढ़वाली लड़कियों की अपेक्षा लम्बी थी। वह कांतियुक्त

← मेरे माता-पिता काम करते हुए

और दिल की बहुत कोमल थी। मेरे माता-पिता ने सुखी परिवार का निर्माण किया था। उनके क्रमशः पांच बच्चे थे—लड़की, लड़का, लड़की, लड़की, लड़का इसी क्रम में मेरा नम्बर तीसरा था।

इस क्षेत्र के सभी सीमावर्ती ग्रामीणों की तरह हमारे भी दो घर थे, एक नकुरी गांव में दूसरा हरसिल में। सर्दियों में जब हरसिल बर्फ से ढक जाता था। तब हम नकुरी में रहते थे। गर्मियों के छह महीनों में हम पच्चीस सौ मीटर से अधिक ऊँचाई पर बसे हरसिल में चले जाते थे जहां ऊंची ढलानों पर बकरियों, भेड़ों और अन्य जानवरों के लिए अच्छा चारा मिलता था। पूर्वी गढ़वाल के अन्य परिवारों के साथ ही हम हरसिल घाटी के छोटे से गांव में रहते थे। लेकिन हमारा गांव 1943 की बाढ़ में बिल्कुल बह गया और इसलिए गर्मियों के मौसम में हम बेघर हो गए।

मेरे पिता और अन्य व्यक्तियों ने, जो विस्थापित हो गए थे, घाटी में ज़मीन खरीदकर नए मकान बनाने की कोशिश की, लेकिन वहां के स्थानीय निवासियों ने इतनी बाधाए डाली कि हमें गर्मियों में किराये का मकान लेकर रहना पड़ा। हमें बहुत मुसीबतों का सामान करना पड़ा लेकिन मेरे पिता ने न तो किसी को रिश्वत दी और न किसी का एहसान किया। अंततः हमने पूरे वर्ष नकुरी गांव में ही रहने का निश्चय कर लिया।

मेरे पिता ने पशुपालन व कच्ची ऊन का व्यापार बंद कर दिया और परिवार ने तैयार माल, बुने हुए कालीन और गढ़वाली औरतों द्वारा पहने जाने वाले कमरबंद तथा बुने हुए स्वेटरों का व्यवसाय शुरू कर दिया। पिता ने कुछ दूरी पर छोटा सा ज़मीन का हिस्सा खरीद लिया और खाद्य फसलों को उगाने का काम किया। इतनी अधिक मेहनत करने के बावजूद परिवार की आवश्यकताओं के लिए यह सब पूरा नहीं पड़ता था।

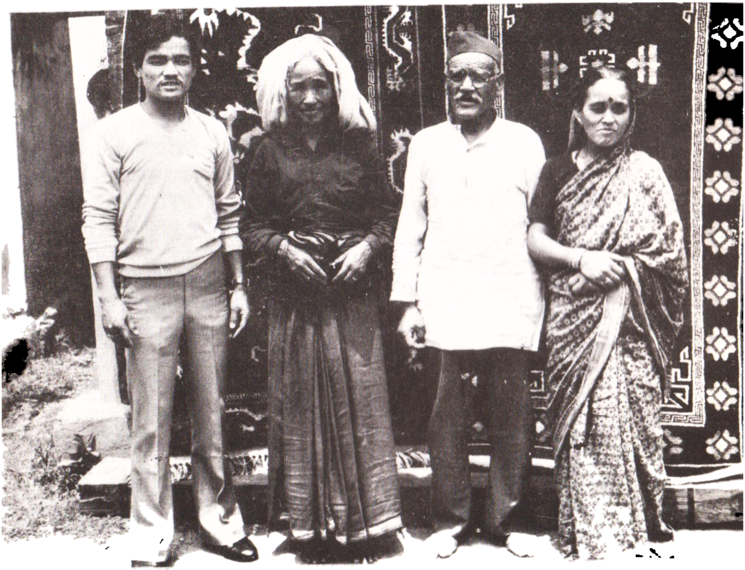
मेरी मां चर्खा कातते हुए →



1 1945 में संतान, एक लड़की का जन्म हुआ जिसका नाम कामलेश्वरी रखा गया। जब वह बहुत छोटी थी तभी उसे स्कूल भेज दिया गया। लेकिन उसे छठी कक्षा के बाद स्कूल छोड़ना पड़ा। परिवार उसकी आगे की पढ़ाई का खर्च नहीं उठा सका। कमला को घर पर और बाहर अपने हिस्से का काम भी करना पड़ता था। वह जंगल से चारा और ईंधन की लकड़ी और घर के लिए पानी ढोकर लाती थी। गढ़वाल में लड़की होने का क्या अर्थ है, यह मैं जानती हूं। यह सब मेहनत के काम मैंने स्वयं किये हैं लेकिन उतने अधिक नहीं जितने कमला दीदी ने किये। हमने कालीन बुनना सीखा था। मेरी बहन बहुत अच्छी बुनाई करती थे। मेरा हाथ भी उतना खराब नहीं था, लेकिन मेरे अंदर एक तरह की बेचैनी थी और मुझे घरेलू काम पसंद नहीं था।

कमलेश्वरी के छः वर्ष बाद हमारे परिवार में अगला आने वाला बच्चा बचन सिंह था। यह मेरा भाई पढ़ाई लिखाई में काफी अच्छा था लेकिन उसकी वास्तविक रुचि पहाड़ों और दुर्गम रास्तों के चढ़ने में थी। वह एक बहुत अच्छा खिलाड़ी भी था। स्नातक परीक्षा पास करने के बाद वह सीमा सुरक्षा बल में इंस्पेक्टर के पद पर भरती हो गया। उसने अपने अधिकारियों को अपनी कार्य कुशलता से उत्तरकाशी में स्थित नेहरू पर्वतारोहण संस्थान में पर्वतारोहण में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए भेजने को विवश कर दिया। उसने वहां पर अच्छे अंकों से पर्वतारोहण के प्रारंभिक और उच्च श्रेणी कोर्स पूरे किये।

मेरे माता-पिता (बीच में), छोटा भाई और बड़ी बहन →



मेरा जन्म 24 मई 1954 को हुआ था। मेरे माता-पिता के अनुसार सभी बच्चों में मैं सबसे अधिक शोर मचाने वाली थी। मैं सबसे अधिक और सबसे ऊंची आवाज में रोया करती थी। मैं अपने माता-पिता को बहुत परेशान करती थी। मेरे पैदा होने के बाद से मेरे परिवार में कभी नीरसता नहीं आई।

मेरे जन्म के तीन साल बाद आने वाली अगली बच्ची उपमा थी। उसने नवीं कक्षा तक पढ़ाई की। मैं अपनी छोटी बहन को छेड़ती बहुत थी। लेकिन उपमा और मैं दोनों बहुत अच्छी दोस्त थीं। मेरी बड़ी बहन की तरह उपमा भी एक ठेठ पहाड़ी लड़की थी—सद्व्यवहार वाली, सीधी सादी तथा घरेलू किस्म की। मैं ही अकेली अक्खड़ थी।

परिवार का सबसे छोटा बच्चा राजेन्द्र सिंह उपमा के तीन साल बाह हुआ था। राजू मज़बूत किस्म का अच्छा खिलाड़ी था। मेरा बड़ा भाई हमेशा राजू से पर्वतारोहण जैसे बाहरी कामों में भाग लेने के लिए कहता रहता था। मुझे इस बात का क्रोध आता था। ''राजू ही क्यों? मैं भी क्यों नहीं पर्वतारोहण का कोर्स कर सकती?'' मैं अक्सर पूछती मैं जितनी अधिक अपने भाइयों से प्यार करती थी, मैं इस बात से नाराज भी होती कि लड़कों को हम लड़कियों की अपेक्षा अधिक अवसर और लाड़ प्यार दिया जाता था। मैंने निश्चय कर लिया था कि मैं पाल परिवार में किसी से पीछे नहीं रहूंगी और न केवल वह करूंगी जो लड़के करते थे, वरन् उनसे अच्छा करके दिखाऊंगी।

परिवार में पिता ही सर्वेसर्वा थे। मैं इस बात को बचपन से ही जानती थी। मैं बहुत बातूनी और शरारती थी। मेरी शरारतें मेरे सख्त मिज़ाज के पिता को आनंदित करती थीं। मैं यह सोचती थी कि मैं पिता की दृष्टि में कुछ भी गलत नहीं कर पा रही हूं। यद्यपि कभी-कभी मैं सीमा पार कर जाती थी।

एक दिन मेरे पिता रामायण का पाठ कर रहे थे। मैंने उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के बहुत प्रयास किए, लेकिन उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया। अपेक्षित रहने की आदत न होने के कारण मैंने अपनी बातों और करतूतों से उनको तंग करना जारी रखा। उन्होंने मुझे एक दो बार धमकाया भी लेकिन मुझ पर कोई असर नहीं पड़ा। अंत में पिता का गुस्सा अपनी सीमा पार कर गया। मुझे उन्होंने उठाया, चबूतरे के पार ले गए और ढलान से मुझे ढकेल दिया। मैं सीधी नीचे गिरने वाली थी कि सौभाग्यवश मेरे हाथ में झाड़ियों की एक मोटी मजबूत शाखा आ गई और मैंने अपनी जान बचाने के लिए उसको कसकर पकड़ लिया। मैं इतनी भयभीत हो गयी थी कि मेरे लिए सांस लेना मुश्किल हो गया। मेरा चेहरा नीला पड़ गया था।

परिवार में एक दम हुल्लड़ मच गया। सामान्यत: शांत रहने वाली मेरी मां, मेरे पिता के ऊपर एक गुस्सैल शेरनी की तरह दहाड़ उठी और गुस्से में उनको न जाने क्या क्या कहा। पिता मुझे बचाने के लिए दौड़े, उन्होंने मुझे ऊपर खींचा और अपनी छाती से लगा लिया। यद्यपि मैं अब सुरक्षित थी लेकिन मैंने दिल दहलाने वाली चिल्लाहट से रोना शुरू कर दिया। पिता पहले से ही पश्चाताप से भरे हुए थे। मेरे इस हृदयविदारक रोने ने

उनको और अधिक विचलित कर दिया। अब मुझे सभी लोगों ने प्यार से दुलराया। मैं इस मन अंदर ही अंदर अत्यधिक आनंदित होती रही और मुझे एक प्रकार की आत्मिक संतुष्टि मिली।

अपनी बहनों के स्वाभाव के विपरीत, जो केवल आवश्यकता के समय ही घर से बाहर जाती थीं, मुझे जंगलों और पहाड़ों में दूर-दूर तक घूमना और जाना अच्छा लगता था। जब मेरे पिता घर से बाहर जाते मैं उनके साथ जाने की जिद्द करती और यदि वे मुझे अपने साथ ले जाने से मना करते तब मैं उन पर बहुत झल्लाती।

एक दिन, जब मैं चार वर्ष की थी, मेरे पिता मुझे जंगल में लगभग दो किलो मीटर दूर खेतों में घूमा कर लाए। दूसरे दिन मेरे माता-पिता अकेले चले गए। यद्यपि मैंने उनसे मुझे साथ ले जाने की जिद्द की और मैं बहुत जोर-जोर से रोई थी। लेकिन वे बिल्कुल भी नहीं पसीजे। मेरे भाई को मेरा ध्यान रखने के लिए कहा गया। कुछ देर बाद मुझे नींद आ गई और मेरा भाई खेलने के लिए बाहर चला गया जब मैं सो कर उठी मैं सीधी उन्हीं खेतों की ओर चल दी जहां हम पहले दिन गए थे। मैंने अनेक छोटे-छोटे पानी के नालों को पार किया और मैं अपने माता-पिता को खोजने की उम्मीद में चलती ही गई। जब मैं चलते चलते बिल्कुल थक गई और मेरे पांव जवाब दे गए तब मैं उनके इंतजार में बैठ गई। कुछ देर बाद मैं वहीं लेटकर सो गयी।

जब मेरे माता-पिता शाम को लौटे तो घर में तहलका मचा हुआ था। मैं काफी देर से खोई हुई थी और कोई नहीं जानता था कि मुझे कहां ढूंढ़ा जाए। उन सबको डर था कि मैं बाहर जाकर किसी नदी नाले में बह गई हूंगी। मेरे भाई बेचारे बचन को अच्छी खासी डांट फटकार पड़ी। अपनी अंतरात्मा से प्रेरित होकर मेरे पिता मुझे उसी पहले दिन वाले रास्ते पर खोजने निकले और बारिश से भीगे रास्ते पर उन्होंने मेरे पैरों के निशान देखे। वे उसी रास्ते पर चलते गए और घर से लगभग दो किलोमीटर दूर उन्होंने मुझे गहरी नींद में सोते हुए पाया। इसके बजाय कि मेरे माता-पिता मुझ पर नाराज होते मैं उल्टे उन पर नाराज हुई। वे केवल दिल खोल कर हँस दिए।

मैं जब किशोरावस्था में थी, मेरा बड़ा भाई बचन मेरा आदर्श था। वह मजबूत और आत्मविश्वासी था। जब हम घूमने जाते थे या पहाड़ों पर चढ़ते थे, तब मैं उसका साथ नहीं दे पाती थी, इसलिए वह मुझे अपने साथ ले जाने में कतराता था। एक दिन उसे जानवरों के लिए चारा लाने के लिए पहाड़ी पर जाना पड़ा। वह मुझे घर में छोड़ गया।

लेकिन मैंने चुपके से उसका पीछा किया।

बचन लकड़ी काटने में व्यस्त था और जैसे ही मैं वहां पहुंची, वह मुझे देख नहीं सका। उसने कुल्हाड़ी वाला हाथ भरपूर वार के लिए उठा लिया था कि तभी उसने अचानक मुझे देखा। उसने अपने हाथ को रोकने की कोशिश की लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी थी। उसकी कुल्हाड़ी की नोक मेरी खोपड़ी में लग चुकी थी।

मेरे सिर से रक्त की तेज धार बह निकली। मुझे बहुत दर्द था लेकिन मैं रोई नहीं। वास्तव में मुझे अपने भाई के लिए बहुत अफसोस हुआ। वह बहुत अधिक चिंतित और डरा हुआ दिख रहा था। उसने पेड़ों की पत्तियों से खून को पोंछने की कोशिश की। जब खून का बहना नहीं रुका, उसने जड़ी बूटी वाले कुछ पौधों को उखाड़ा और घाव पर उनको लगाया। इससे खून का बहना रुक गया और फिर मेरे भाई बचन ने पानी के चश्में से मेरा चेहरा धोकर खून के धब्बे साफ किए।

घर पहुंचने से पहले मुझसे वायदा किया कि मैं किसी को इस चोट के बारे में नहीं बताऊंगी। उसने मुझसे कुछ दिनों तक नहाने के लिए भी मना कर दिया।

मैंने अपना वायदा निभाया लेकिन कुछ दिनों बाद मेरी माँ ने ध्यान दिया कि मैं नहाने से बच रही हूँ। उसने मुझे पकड़ा और खींच कर नदी तक ले गई। मेरा सिर धोते समय उसने बालों का गुच्छा देखा और जब उसने उसे साफ किया तो घाव से फिर खून बहना शुरू हो गया। एकदम डरी हुई मेरी माँ ने यह जानने की भरपूर कोशिश की कि मुझे चोट कैसे लगी है। लेकिन मैं अपने भाई को बचाने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ थी। मैंने चुप्पी साध ली। अंत में मेरे भाई ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। उसने माँ को बताया कि किस प्रकार उसने अचानक मुझे चोट पहुंचायी थी। हर आदमी मेरे इस आत्मनियंत्रण पर बहुत अधिक अचंभित था।

मैं एक बहुत बड़ी स्वप्नदृष्टा थी। मैंने कभी नहीं सोचा था कि कोई चीज मेरी पहुंच के बाहर है। यदि किसी पत्रिका या अखबार में प्रधान मंत्री का नवयुवकों के साथ कोई चित्र छपता था तो मैं कहा करती थी, "मैं इंदिरा गांधी से मिलूंगी।" जब कोई कार हमारे घर के नीचे की सड़क से गुज़रती, मैं कहती थी, "जब मैं बड़ी हो जाऊंगी तो मैं भी कार खरीदूंगी।" लेकिन हवाई जहाज मुझे सबसे अधिक आकर्षित करता था। जब भी मैं किसी हवाई जहाज या हैलीकॉप्टर को देखती, मैं उत्साहपूर्वक कहा करती थी, "एक दिन मैं भी हवाई जहाज में उड़ान भरूंगी।"

मेरा परिवार बहुत गरीब था और न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति करने में भी असमर्थ था। मेरे माता पिता इस बात से दुखी थे कि उनके बच्चे ऐसे सपनों की दुनिया में रहते थे जो कभी भी साकार नहीं हो सकते लेकिन परिवार के छोटे सदस्य मेरी कल्पनाओं में बहुत अधिक आनंद लेते थे। और मुझे प्रेरित करते रहते थे। परन्तु मुझे अधिक प्रोत्साहन की जरूरत नहीं थी। मैं कारों, हवाई जहाजों और बड़े-बड़े लोगों से मिलने के बारे में बात किया करती थी। जब मेरे भाई बहने मेरी बातों पर हँसते थे तो खड़ी होकर मैं ऊँची आवाज़ में चिल्लाया करती थी।

"इंतज़ार करो मैं तुम्हें सब कुछ दिखा दूंगी।"



मेरा अध्ययन कक्ष

स्कूल के दिन

जब मैं केवल पाँच साल की थी, मैंने ''डून्डा हरसिल जूनियर हाई स्कूल'' में प्रवेश लिया। जैसा कि सकूल के नाम से स्पष्ट था, यह डून्डा और हरसिल दोनों स्थानों पर चलता था। सर्दियों में हरसिल जब बिल्कुल बर्फ से ढक जाता, तब स्कूल मेरे गाँव नकुरी से पाँच किलोमीटर दूर डून्डा गाँव में चला जाता था। गर्मी आने पर गाँव के नीचे के भाग के लोग अधिकांशतः स्कूल समेत, पूरी तरह से हरसिल में स्थानांतरित हो जाते थे। मुझे हर छठे महीने इस लंबे रास्ते से आने जाने में अत्यधिक आनंद आता था। हम भोड़ों और बकरियों के नन्हें-नन्हें बच्चों को हिलाते और दुलारते हुए, अपने सभी पशुओं को एक समूह में इकट्ठा कर रास्ते में रसभरी और फूलों को तोड़ते और खाते हुए चलते तथा पथरीले पहाड़ी ढलानों पर लुका छिपी का खेल खेलते हुए जाते। जब हम थक जाते तब घोड़े या खच्चर की सवारी करते। रास्ते में आने वाले विश्राम स्थलों से परिचित होने के कारण हम दौड़कर अपने समूह से दो तीन किलोमीटर आगे तक बढ़ जाते और वहां पर रसोई के लिए सूखी लकड़ियां इकट्ठी करते। मुझे टेंटों में रहना भी अच्छा लगता था और फिर नये स्थान पर स्कूल जाने का एक अलग ही उत्साह होता था।

प्रकृति के साथ मेरे इस खुलाव ने मुझे निडर और स्वतन्त्र बना दिया था। दस साल की आयु में ही मैं जंगलों और पहाड़ी ढलानों पर प्रायः अकेली घूमा करती थी। बसंत के दिनों में मैं उन प्रवासी पक्षियों के झुंडों को देखने के लिए चुपचाप घर से बाहर निकल आती थी जो सर्दियों में मैदानों में रहते थे। मैं घूमते घुमाते लोकप्रिय फूल ब्रह्म कमल भी



नकुरी - मेरा गांव

घर लाया करती थी और झोली भरकर एक विशेष फूल की सिन्दूरी रंग की सुंदर कलियां लाती थी जिनके पत्तों से स्फूर्तिदायक पेय बनता है।

मैं अपनी कक्षा में सबसे अधिक शरारती थी। एक घटना जो मुझे आज भी स्पष्ट रूप से याद है, एक युवा अध्यापिका के बारे में थी जो बहुत ही सुंदर और गौरवर्णीय थी। मैं और सभी लड़कियां उससे ईर्ष्या करती थीं और उसकी सुंदरता का रहस्य जानने के लिए उत्सुक रहती थीं। एक दिन मैं अपनी दो विश्वसनीय सहेलियों के साथ चुपचाप उसकी कक्षा से भाग निकली और खिड़की के रास्ते से उसके कमरे में घुस गई। हम तीनों उसकी ड्रेसिंग टेबल पर रखी हुई अनेक प्रकार की बोतलों और जारों को देख रही थीं कि हमें बाहर पैरों की आहट सुनाई दी। हम शीघ्रता से बिस्तर के नीचे छिप गए। अध्यापिका एक पतली और लंबी छड़ी लिए अंदर आई, जो उन्होंने तुरन्त ही बिस्तर के नीचे घुमा दी। हम आखिरी कोने तक सिकुड़ते चले गए लेकिन तभी मेरी एक सहेली हीं हीं कर हँस दी। इसके बाद तो सब को दंडित किया गया। नेता होने के नाते मेरी सबसे अधिक पिटाई हुई। तीसरी लड़की को आधी पिटाई से ही छुटकारा मिल गया, क्योंकि तब तक छड़ी टूट गई थी।

इसके साथ ही मेरी सुन्दरता की खोज समाप्त हो गई। जब भी मैं उस घटना तथा उसके परिणामस्वरूप होने वाली पिटाई के बारे में सोचती हूँ, मैं सौंदर्य प्रसाधनों के विचार से ही कांप जाती हूँ। मैं आज भी किसी प्रसाधन का उपयोग नहीं करती हूँ।

मुझे स्कूल जाना अच्छा लगता था। मैं सुबह जल्दी उठ जाती थी और कमला दीदी अथवा माँ के साथ अपना दोपहर का भोजन तैयार कराने में मदद करती थी। मैं उन लड़कियों के समूह में पहुंचने वाली पहली लड़की होती थी जो सबसे पहले स्कूल जाती थी।

मैं हर तरह की बाहरी क्रीड़ा में विशिष्टता हासिल करना चाहती थी, विशेष रूप से लड़कों के साथ होने वाली प्रतियोगिताओं में। मैं दौड़ की वार्षिक प्रतियोगिताओं जैसे कि तीन टंगड़ी, सुई धागे वाली दौड़, बोरा दौड़, तथा सिर पर पानी भरा मटका लेकर होने वाली दौड़ आदि का अभ्यास प्रतियोगिताओं के शुरू होने से पहले पूरे परिश्रम से करती थी। चूँकि मैं अपनी पढ़ाई लिखाई में भी काफी अच्छी थी, मेरे माता-पिता खेलों में मेरी रुचि को देखते हुए मुझे प्रोत्साहित करते थे और जब भी मैं कोई पुरस्कार लेकर घर आती थी, वे बहुत अधिक गौरवान्वित महसूस करते थे।

एक इतवार की सुबह की बात है कि जब स्कूल हरसिल में चल रहा था, हम दस लड़के लड़कियों ने पहाड़ पर पिकनिक मनाने का निश्चय किया। हम 3500 मीटर से ऊपर हिम रेखा तक पहुंच गए और हम अपने पैरों के नीचे चरमराती बर्फ को महसूस करते हुए आंदित हुए थे। हम ऊंचे चढ़ते ही गए, जब तक कि हममें से एक लड़की ने भूख की शिकायत नहीं की। तब एक ऊंची उठी हुई चट्टान ढूंढ कर, हम उस पर खाना खाने के लिए बैठे। इस धारणा से कि हम कहीं भी पहाड़ी नदी या नाले से पानी लेकर पीते रहेंगे, हम अपने साथ पानी नहीं लाये थे। लेकिन इस ऊंचाई पर (लगभग 4000 मीटर)हर चीज बर्फ से ढकी हुई थी। इसलिए हमने अपनी प्यास बर्फ के टुकड़े चूस चूस कर बुझाई।

हमारी परेशानियां वास्तव में वापसी यात्रा में शुरू हुईं। दोपहर बाद का समय था और ढलान पर सूरज की किरणें नहीं पड़ रही थीं। बर्फ और अधिक पक्का जम जाने के कारण फिसलन वाला हो गया था, इसलिए उतराई वाली हमारी यात्रा न केवल धीमी थी, बल्कि खतरनाक भी थी।

इन सब कष्टों के साथ साथ हमारे दल के काफी सदस्यों को सिरदर्द और मिचली की शिकायत होने लगी। एक लड़के को पूरे खाने की उल्टी हो गई। हमने सोचा कि शायद यह विषाक्त भोजन के कारण अथवा, दूषित बर्फ, जो हमने चूसा था, के कारण हो गयी है। सामान्यत: यह भी विश्वास किया गया कि यह अजीब तरह की बीमारी इस ऊंचाई पर पाए जाने वाले विशेष फूलों और पत्तियों की गंध के कारण हुई है। अब मैं इस बात को जानती हूँ कि ये लक्षण तीन हजार मीटर की ऊंचाई पर चलने वाली हवा में आक्सीजन की कमी के कारण हो जाते हैं। जैसे जैसे अंधेरा बढ़ता गया, हमें जगह-जगह रुकना पड़ता था और झाड़ियों से अपने सिर को ढकना पड़ता था। हमारे पास न खाना था न पानी और हमने सबेरा होने के इंतजार में ठंड और दुखदायक रात गुजारी।

जब हम अगली सुबह घर पहुंचे, हमें कहीं से ज़रा भी सहानुभूति नहीं मिली। इसके विपरीत हमारी पिटाई की गई। लेकिन इससे मैं ज़रा भी नहीं डरी। मैंने पहाड़ों पर चढ़ने के उत्साह का मजा लिया था और अब मुझे कोई आगे बढ़ने से रोक नहीं सकता था।

शिक्षा

मैं लगभग तेरह वर्ष की थी और आठवीं की परीक्षा अच्छे अंकों से पास की थी, तभी मेरे पिता ने कहा कि वे अब मुझे स्कूल में भेजने का खर्च बर्दाशत नहीं कर सकते और अब मुझे घर के काम में मदद देनी चाहिए। यद्यपि मेंने अपने मन में ऊंची शिक्षा प्राप्त करने का निश्चय कर लिया था, इसलिए मैं दिन के समय अपने हिस्से का, बल्कि उससे कहीं अधिक घर का काम करती थी और अपने मित्रों से स्कूल की किताबें उधार लेकर देर रात तक बैठकर अध्ययन करती थी। मेरे तीव्र उत्साह और दृढ़ संकल्प को देखकर हर आदमी प्रभावित था और अन्त में मेरी माता और बहन कमला ने मेरे पिता से मुझे आगे पढ़ाने की वकालत की और मुझे नवीं कक्षा में दाखिला लेने की अनुमति मिल गई।

मैं जानती थी कि मुझे आगे पढ़ाने के लिए घर में पैसे की जरूरत थी, इसलिए मैंने सिलाई का काम सीख लिया और मैं सलवार-कमीज के सूट सिलकर पांच से छह रुपए प्रतिदिन कमाने लगी। मैं पढ़ाई में काफी अच्छी थी, लेकिन खेल कूद में और भी बेहतर। जिन-जिन खोलों में मेंने भाग लिया, अधिकांश मे प्रथम रही और मैदानी खेलों जैसे कि गोला फैंक, डिस्कस फैंक, भाला फैंक, व लम्बी दौड़ में अनेक कम जीते।

लेकिन जैसे ही मैंने हाई स्कूल परीक्षा पास की मेरे पिता ने मुझे कालेज में दाखिला न दिलाने के बारे में दृढ़ निश्चय कर लिया। समस्या वही थी—घर में पढ़ाने के लिए पर्याप्त पैसा नहीं था। तब मेरी प्रधानाचार्य ने हस्तक्षेप किया। उन्होंने लिखा कि मैंने केवल तीन अंकों से फर्स्ट डिवीजन खो दी है और चहुंमुखी प्रतिभावान होने के नाते मेरा भविष्य

उज्जवल है। पिताजी एक बार फिर द्रवित हो उठे और मैंने "प्री मैडिकल" करने की दृष्टि से रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान और जीव विज्ञान लेकर इंटरमीडिएट कक्षा में दाखिला ले लिया। यद्यपि मैंने विज्ञान विषयों में इंटरमीडिएट पास कर लिया, मैं "प्री मैडिकल" की परीक्षा में सफल नहीं हो सकी और मैंने साहित्य विषय ले लिए। हिमालय के प्रति विशेष रुचि होने के कारण मैंने बी.ए. में संस्कृत विषय लिया। मैं जानती थी कि कालिदास का "कुमार संभव" तथा अन्य संस्कृत साहित्य इन पर्वतों के वर्णन में काफी समृद्ध है। इन पर्वतों को कालिदास ने **"पृथ्वी-मापक दंड"** की संज्ञा दी है।

मुझे बी.ए. करने की अनुमति तो मिल गई, लेकिन आगे की पढ़ाई के लिए परिवार का विरोध जारी रहा। मेरे संकल्प पर इसका कोई अंतर नहीं पड़ा। अब कोई भी वस्तु या व्यक्ति मेरे निश्चय समय के अंदर एक राइफल, एक स्टेनगन और एक ब्रेन लाइट मशीनगन को पूरी तरह खोलना था और फिर उसी तरह से जोड़ना था। मैं इसमें प्रथम आई। मेरी अध्यापिका बहुत प्रसन्न थीं और लड़कों को व्यंग्यात्मक रूप से कह रही थीं कि लड़कियों को ही अब देश की रक्षा करनी होगी। लड़कों को तो चूड़ियां पहन कर घर बैठना चाहिए।

बी.ए. करने के उपरांत मुझे आगे की पढ़ाई में विशेष बाधा का सामना नहीं करना पड़ा, क्योंकि तब तक मेरे पिता चाहने लगे थे कि एम.ए. की डिग्री प्राप्त करने वाली अपने गांव की में पहली लड़की बनूं। मैंने डी.ए.वी. कालेज देहरादून से संस्कृत में एम.ए. किया और गढ़वाल विश्वविद्यालय श्रीनगर से बी.एड. किया।

उच्च शिक्षा प्राप्त करना मेरा प्रथम उद्देश्य था। इसलिए मैंने पर्वतारोहण की अपनी प्रबल इच्छा को रोककर रखा। अब चूंकि मैंने एम.ए., बी.एड. कर लिया था, मैं अपने लक्ष्यों को पुर्नव्यवस्थित कर सकती थी और मैंने अपने आप को पर्वतारोहण के लिए पूरी तरह से समर्पित कर दिया।



मैंने पर्वतारोहण सीखा

मैं नेहरू पर्वतारोहण संस्थान में प्रवेश पाकर एक अच्छी पर्वतारोही बनने की इच्छुक थी, यद्यपि मेरी माँ का विचार था कि यह काम लड़कियों के लिए बहुत ही जोखिम भरा है। लेकिन मुझे अच्छी शिक्षा देने के लिए मेरे पिता द्वारा किए गए त्यागों को मैं भूली नहीं थी। अब परिवार के लिए कुछ करने की बारी मेरी थी। मैंने अनेक कॉलेजों में अध्यापिका की नौकरी के लिए आवेदन पत्र भेजे लेकिन मुझे केवल कम वेतन वाले अस्थायी पदों के लिए ही उत्तर मिले और वे भी केवल प्राइमरी स्तर के। मैं इतने परिश्रम से प्राप्त की गई अपनी शैक्षणिक योग्यताओं का अवमूल्यन करने के लिए तैयार नहीं थी। इसलिए इन सब नौकरियों को मैंने स्वीकार नहीं किया।

घर में खाली बैठने की बजाय मैंने नेहरू संस्थान के प्रारंभिक पर्वतारोही कोर्स में प्रवेश पाने के लिए आवेदन किया। लेकिन वहां पर उस वर्ष के सभी स्थान भरे जा चुके थे। मुझे अगले वर्ष प्रवेश मिल गया और मैंने वहां पर बर्फ और चट्टानों पर चढ़ने के तरीकों का अध्ययन किया और "रैपलिंग" के रोमांच का अनुभव किया। रैपलिंग का अर्थ है– ऊंची खड़ी चट्टान अथवा हिम खंड मे एक नाइलोन की रस्सी के सहारे कुछ ही क्षणों में नीचे आना। हमें शिविर लगाने के तरीके अथवा पर्वतीय शिखरों को सुरक्षित ढंग से पार करने के तरीके भी सिखाये गए।

नेहरू संस्थान के उपप्रधानाचार्य मेजर प्रेमचन्द प्रशिक्षण अधिकारी थे। वह बड़े कठोर प्रशिक्षक थे, जो बहुत ऊंचे स्तर के प्रदर्शन की अपेक्षा करते थे। मैंने सोचा कि मैंने



एक सीधी ढलाऊ चट्टान से रैपलिंग करते हुए

शायद इतना अच्छा प्रदर्शन किया है कि मुझे रजत हिम पदक और एक प्रमाण पत्र तो मिलेगा ही। परंतु वास्तव में मुझे "ए" ग्रेड मिला था और मुझे उस कोर्स की सर्वोत्तम छात्रा घोषित किया गया था। उपप्रधानाचार्य ने अपनी रिपोर्ट में मुझे "एवरेस्ट सामग्री" के रूप में लिखा। समय के उस दौर में मैंने इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया।

जब मैंने सुना कि "इंडियन माउंनटेनियरिंग फाउडेंशन" (आई.एम.एफ.) 1984 में एवरेस्ट पर जाने के लिए एक मिले जुले अभियान की योजना बना रहा है और उनको पर्वतारोहण में प्रतिभावन और अनुभवी महिलाओं की तलाश है तो मैंने इस पर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया क्योंकि इस स्तर पर मैं दोनों में से कुछ भी होने का दावा नहीं कर सकती थी। इसलिए मैं आई.एम.एफ. का पत्र पाकर आश्चर्यचकित रह गई। इसमें सूचित किया गया था कि मुझे एवरेस्ट अभियान के लिए आयोजित जाँच शिविर के लिए चुना गया है। मुझे इस बात की पुष्टि करने के लिए कहा गया था कि मैं शिविर में उपस्थित होऊं।

उन्होंने किस तरह से एवरेस्ट के लिए मेरे बारे में विचार किया ? मैंने तो बहुत कम पर्वतारोहण किया था। एवरेस्ट वास्तव में एक पहुंच से बाहर की चीज थी। इतने अधिक महत्वपूर्ण साहसिक कार्य के लिए अपनी योग्यता पर संदेह होने के कारण मैंने आई.एम.एफ. के पत्र का उत्तर नहीं दिया। मैंने केवल आगामी प्रशिक्षण कोर्स के बारे में ही सोचा था। अक्तूबर 1982 में मुझे एडवांस कोर्स के लिए खाली हुए एक स्थान में प्रवेश मिल गया। इस कोर्स में हमने चट्टान, बर्फ और हिम पर चढ़ने की और अधिक उच्च तकनीकें सीखीं। हमें अभियान को आयोजित करने का भी प्रशिक्षण दिया गया। अधिक ऊंचाई के अनुभव के रूप मे मैंने "ब्लैक पीक" अथवा "काला नाग" (6,387 मीटर) की चढ़ाई की।

इस कोर्स में भी मुझे "ए" ग्रेड मिला और अभियानों में भाग लेने के लिए मेरी संस्तुति की गई थी। मेरे प्रशिक्षक बहुत अधिक प्रोत्साहन देने वाले थे और वे कहते थे मेरे अंदर अच्छे पर्वतारोही के लक्षण हैं। मुझे अपनी आरोहण की दक्षता को और अधिक बढ़ाने के लिए हर अवसर का लाभ उठाना चाहिए। लगभग इसी समय मुझे एवरेस्ट के जांच कैम्प में भाग लेने के लिए आई.एम.एफ., की तरफ से दूसरा पत्र प्राप्त हुआ। जब मेरे प्रशिक्षकों को इस बात का पता चला कि मैंने आई.एम.एफ. के पहले पत्र की उपेक्षा की है और अब दूसरा पत्र मिला है, उन्होंने कहा "बचेन्द्री क्या तुम नहीं समझतीं कि तुम

एक सुनहरा अवसर खो रही हो ?'' उनके कहने पर मैंने अपनी सहमति प्रदान कर दी।

इसके बाद मैं एक बदली हुई इंसान थी। यदि आई.एम.एफ. ने मुझे एवरेस्ट दल के लिए संभावित प्रत्याशी समझा था, मैं उनकी बात कैसे गिरा सकती थी। उत्साहपूर्वक मैंने आरोहण के लिए आवश्यक घरेलू अभ्यासों के लिए अपना नाम लिखवा दिया। अपने आम को मजबूत बनाने के लिए मैं घास चारे और सूखी लकड़ी के भारी से भारी गट्ठर घर लाने लगी। मैं रोज आने जाने का रास्ता भी बदल देती थी। मैं अधिक दुर्गम रास्तों और घाटियों से होकर निकलती और जान बूझ कर पत्थरों के ऊपर से चलती अथवा सीधी खड़ी ढलाऊ चट्टानों से उतरती जिससे कि मैं बेहतर संतुलन प्राप्त कर सकूं, ऊंचाई के डर को निकाल सकूं और चक्कर से निज़ात पा सकूं। मेरे सभी क्रियाकलापों का उद्देश्य एक सच्चा दक्ष पर्वतारोही बनना था।

1982 के उत्तरार्ध में मैंने गंगोत्री के जाँच कैम्प में भाग लिया। मेरे प्रशिक्षक मेरे प्रदर्शन से बहुत अधिक प्रसन्न हुए और इस प्रशिक्षण के दौरान मैंने गंगोत्री (6672 मीटर) और रूड़गेरा (5819 मीटर) की चढ़ाई की। मुझे अपनी आरोहण योयग्ता में आत्मविश्वास मिला।

इसके तुरंत बाद मुझे सूचना मिली कि सितम्बर-अक्तूबर 1983 में होने वाले अंतिम चयन शिविर के लिए मेरा नाम लिया जा रहा है।

भागीरथी - सात बहनें

जिस ढंग से मेरा पर्वतारोहण का जीवन ढल रहा था, मैं उससे प्रसन्न थी लेकिन इससे मेरी या मेरे परिवार की आर्थिक कठिनाइयों का समाधान नहीं हुआ। तब फरवरी 1983 में नेशनल एडवैंचर फाऊन्डेशन (एन.ए.एफ.) के निदेशक ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह, नेहरू संस्थान के प्रशिक्षकों के लिए एक साहसिक कोर्स चलाने के लिए उत्तरकाशी आये और उन्होंने छात्रवृत्ति के लिए मेरे सहित सात स्थानीय और शिक्षित महिलाओं का चयन किया।

मैंने इस प्रतिष्ठित दक्ष तथा वरिष्ठ पर्वतारोही में भरोसा कर उन्हें अपनी समस्या से अवगत कराया कि मेरे माता-पिता परिवार के आर्थिक बोझ को कम करने की दृष्टि से मुझ पर विवाह करने के लिए दबाव डाल रहे थे। मैंने उनसे ऐसे लोगों के लिए जो निर्धन और जीविका रहित थे, कुछ रास्ता निकालने के लिए कहा, ताकि पर्वतारोहण में हमारी रुचि और प्रतिभा का उपयोग हो सके।

दूसरे दिन प्रातः ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह ने हमें "**भागीरथी-सेवन सिस्टर्स एडवैंचर क्लब**" शुरू करने के लिए एन.ए.एफ. के आवेदन पत्र भरने के लिए कहा। उन्होंने स्पष्ट करते हुए बताया कि यह लड़कियों और महिलाओं की एक अलग प्रकार की संस्था होगी जो जोखिम के कार्यों में लगी लड़कियों की सहायता करेगी। उन्होंने वायदा किया कि यह योजना प्रशिक्षित लड़कियों और महिलाओं की आर्थिक चिंताओं का ध्यान रखेगी। हमारा मनोबल आसमान छूने लगा और मन लगाकर गंभीरतापूर्वक प्रशिक्षण कार्य में जुट गए।

सात बहनों में से प्रत्येक ने अच्छा नाम कमाया। ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह ने बताया कि हमारा प्रदर्शन पुरूषों की तुलना में कहीं अधिक बेहतर था।

हमारे प्रवास के अंतिम दिनों तक ब्रिगेडियर हमारे लिए एक पिता की तरह हो चुके थे और मेरे सुझाव पर हमने उन्हें "छोटे चाचा" कहकर पुकारना शुरू कर दिया।

जब छोटे चाचा ने 28 फरवरी 1983 को उत्तरकाशी छोड़ा, हम सब की आँखों में आंसू थे। लेकिन उन्होंने तीन महीने के अंदर-अंदर लौट कर आने का वादा किया जिससे



सात बहनें

वे हमारे साहसिक कार्यक्रमों के चलाने में मदद कर सकें। उसी दौरान हमें स्थानीय बच्चों को चट्टानों की चढ़ाई के लिए ले जाने के लिए कहा गया। हमारे अपने कार्यक्रमों को चलाने की संभावना काफी रोमांचकारी थी। मैं इसकी तैयारी में नकुरी से लेकर तेखला में चट्टान आरोहण क्षेत्र तक घूमने और जॉगिंग का अभ्यास करती थी। यह रास्ता एक तरफ से अट्ठारह किलो मीटर पड़ता था। इस अभ्यास ने मुझे आरोहण की भावी चुनौतियों का सामना करने के लिए मज़बूत बनाने में सहायता की।

वायदे के अनुसार ब्रिगेडियर जून में आ गए। वे अपने साथ हमारे लिए शिविर लगाने और ट्रैकिंग उपकरणों के पच्चीस सैट साथ लाए जिससे कि लड़कियों के लिए दो माहसिक कोर्स साथ-साथ चलाए जा सकें। सेना की सहायता से उन्होंने तेखला में एक छोलदारी शिविर लगाने की व्यवस्था भी की।

पहले समूह में जमशेदपुर से आई तेरह लड़कियां थीं। दूसरे दल में मेघालय से आई शिलांग की पन्द्रह चुस्त खासी लड़कियां थीं।

प्रत्येक कोर्स में छात्रवृत्ति के आधार पर स्थानीय लड़कियों को सम्मिलित कर बीस-बीस के समूह बनाए गये। मुझे कोर्स का निदेशक और विजया पंत को उपनिदेशक बनाया गया। क्वार्टर मास्टर तथा चिकित्सा सहायक के कार्य बारी बारी से दूसरी सात बहनों को सौंपे गये। कोर्स में काम करने के लिए हमें कुछ मानदेय भी दिया गया।

कार्यक्रम में विभिन्नता थी। चट्टान अरोहण के लिए तीन दिन रखे गये थे, एक दिन इसके बाद नदी पार करने के लिये तथा शिविर के लिए था। इसके अतिरिक्त पर्वतारोहण की रस्सियों का उपयोग रसोई बनाना तथा बीहड़ जंगल में सुरक्षा प्राप्त करना भी सिखाया गया था। हमारे साथ एक वन्य रेंजर था जिसने हमें उस क्षेत्र की वनस्पति और वन्य जीवन के बारे में काफी कुछ बताया। दो छोटी और एक लंबी यात्रा सहित हमने लगभग 150 किलोमीटर का रास्ता तय किया और 2500 से 3000 मीटर तक की ऊंचाई की चढ़ाई उतराई की।

लम्बी यात्रा के दौरान हमारा सर्वोच्च शिविर लगभग 3000 मीटर पर प्राकृतिक सौन्दर्य स्थली डोडीताल में था। यहाँ पर ठंडे पानी और मछलियों से भरपूर एक सुंदर झील के चारों ओर आकर्षक इन्द्रधनुषी आभा लिए लम्बे घने हरे हरे देवदार के वृक्ष थे। हम यहाँ पर तीन रात रुके। हम लगभग 4000 मीटर की ऊंचाई पर बर्करियां खाल में पहाड़ की चोटी तक भी गये। कुछ लड़कियों का तो बर्फ के साथ यह पहला संपर्क था और वे खेलते कूदते बिलौटों की तरह बर्फीले मैदानों में कूदती फांदती और एक दूसरे के ऊपर बर्फ के गोले फेंकती नजर आती थीं। डोडीताल लौटने से पहले उन्हें बर्फ पर फिसलने के बारे में तथा अन्य बर्फ क्रीड़ाओं में कुछ आरंभिक शिक्षण दिया गया।

मैंने छोटे चाचा के निर्देशन में विजया की मदद से अपना पहला कोर्स पूरा किया। उन्होंने हमें निर्देशन दिया परन्तु विस्तार से कार्य करने के लिए स्वतंत्र कर दिया। उनका सबसे अधिक स्मरणीय योगदान था, मंत्र मुग्ध करने वाली घटनाओं से भरपूर पर्वतों

तथा आरोहण संबंधी विभिन्न विषयों पर उनकी बातें। जब भी छोटे चाचा चिल्लाते "लड़कियों, एक और कहानी सुनो," हम सब उत्सुकता से उनको चारों तरफ से घेर लेतीं। मैंने उन्हें बताया कि मैं उनके पढ़ाने के तरीके से कितनी प्रभावित थी, उन्होंने विनम्रता से कहा, "मैंने यह तेनज़िंग से सीखा है।"

अपने कार्यालय संबंधी काम का बहाना बनाकर छोटे चाचा ने दूसरा कोर्स पूरी तरह से स्वतंत्र रूप से हमें करने के लिए कहा—मैं शुरू में आशंकित थी, लेकिन जिम्मेदारी के साथ ही विश्वास जमता गया और सभी कुछ ठीक-ठाक हो गया। जब बच्चों ने छोटे चाचा को बताया कि उनको "बचेन्द्री दीदी" के साथ ट्रेकिंग में कितना आनन्द आया, मुझे अत्यधिक संतुष्टि और विशेष उपलब्धि क्रा अनुभव हुआ।

जुलाई 83 के मध्य में ब्रिगेडियर ज्ञानसिह प्रसिद्ध पर्वतारोही चन्द्रप्रभा अटवाल (मेरे लिए चन्द्रा दीदी), विजया पंत और मुझे लेकर दिल्ली गए। इस समय तक चन्द्रा दीदी "भागीरथी - सेवन सिस्टर्स एडवेंचर क्लब" की अध्यक्षा और मैं उपाध्यक्षा चुन ली गई थीं।

राजधानी में छोटे चाचा ने टेलीविजन के लोकप्रिय कार्यक्रम "घर बाहर" में हमारे इंटरव्यू की व्यवस्था कर दी थी। तीन राष्ट्रीय दैनिक पत्रों ने भी हमारा साक्षात्कार लिया था। हमारे फोटो सहित यह साक्षात्कार और लेख दूसरे दिन सबेरे के अखबारों में छपे और जब हम जनपथ पर खरीदारी कर रहे थे, हमें अनेक युवाओं ने रोका और पूछा "क्या मैंने तुम्हें टी.वी. पर नहीं देखा था?" अथवा "क्या तुम वही महिलाएं हो जिनके चित्र मैंने अखबार में देखे थे?"

हमारे छोटे क्लब "भागीरथी - सेवन सिस्टर्स एडवैंचर क्लब" ने राजधानी में पहले से ही रंग जमाना शुरू कर दिया था।

यशस्वी लोगों से भेंट

अगस्त 1983 के अंत में नई दिल्ली में आयोजित प्रथम "हिमालय माउंटेनियरिंग एण्ड टूरिज़्म मीट" में मुझे निमंत्रित किया गया। इनमें दो सौ से अधिक प्रतिनिधियों ने भाग लिया, जिनमें अधिकांश पर्वतारोहण के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय ख्याति की विभूतियां थीं। यद्यपि मुझे इतने अधिक यशस्वी लोगों की उपस्थिति में भय लग रहा था, लेकिन मुझे अंदर से बहुत अधिक प्रेरणा भी मिल रही थी। वास्तव में इन प्रतिष्ठित लोगों से उस समय मेरी भेंट केवल कभी कभी लौट कर आने वाली स्मित मुस्कान तक ही सीमित रही, जब तक कि मैं उस ताज पैलेस होटल के भीड़ भरे कनवैन्शन हॉल में एक व्यक्ति से धक्का खाकर अचानक टकरा नहीं गई।

मैं दो महान व्यक्तियों से अनजान नहीं रह सकी। एक तो अनुश्रुत शेरपा तेनजिंग नोर्गे जो हिलेरी के साथ एवरेस्ट की चोटी पर पहुंचने वाले पहले व्यक्ति थे और दूसरी जापान की नाटी महिला जुन्को ताबई जो पृथ्वी की सबसे ऊंची चोटी पर कदम रखने वाली पहली महिला है।

मैं जब स्कूल में पढ़ती थी तब से ही तेनजिंग के प्रति आदर भाव रखती थी, लेकिन अब मैं उनके इतने समीप थी और मेरे अंदर अपना परिचय देने का साहस नहीं था। तभी नेहरू संस्थान के डॉक्टर की पत्नी शेरी ने मुझे सामूहिक फोटोग्राफ में शामिल होने के लिए कहा और मैंने स्वयं को तेनज़िंग के साथ खड़े हुए पाया। यद्यपि मैं एवरेस्ट के इस विजेता से बात करना चाहती थी लेकिन मेरी ज़बान बंद हो गई और एक क्षण के पश्चात ही तेनज़िंग को उनके प्रशंसक दर ले गए।



इस मीटिंग के लगभग तुरन्त बाद बद्रीनाथ से ऊपर ''माना'' पर्वत पर आयोजित ''एवरेस्ट 84 अभियान'' के लिए अंतिम चयन शिविर में मैं गई। शुरू-शुरू में मुझे ज्वर आ गया और मुझे ''बेस कैम्प'' में ही रुकना पड़ा। मैं बहुत चिंतित थी कि यदि मैं ठीक नहीं हुई और चयन शिविर कोर्स को पूरा नहीं कर सकी तो एवरेस्ट दल के लिए मेरा विचार नहीं किया जाएगा। यह मेरे चिर प्रतीक्षित सपने का दुखद अंत होगा। भाग्यवश मैं जल्दी ही पूरी तरह से स्वस्थ हो गई और छूट गए प्रशिक्षण कोर्स को आसानी से पूरा करने में समर्थ थी। इस शिविर में ऊंचा चढ़ने की बजाय अभ्यास करने पर अधिक जोर था। फिर भी मैं लगभग 7500 मीटर ऊँची ''माना'' चोटी पर चढ़ सकी जो उस वक्त तक का सर्वाधिक रिकार्ड था।

यह शिविर एवरेस्ट दल में प्रवेश पाने के लिए निर्णायक था, इसलिए प्रत्येक ने अपनी भरसक कोशिश की। बाकी सभी लोग अनुभवी पर्वतारोही थे, मैं ही उनमें अकेली नौसिखिया थी। फिर भी लगा कि मैंने तकनीकी चढ़ाई, शारीरिक क्षमता और ऊंचाई के अनुकूल अपने आप को ढालने में अच्छी तरह से तैयार कर लिया है। यद्यपि मैं यह नहीं कह सकती थी कि अंतिम वरीयता सूची में मेरा क्या स्थान होगा। लेकिन फिर भी आरोही के रूप में मुझे अपने कौशल पर विश्वास था।

जब शिविर समाप्त हुआ प्रतिभागियों को अपना सामान सड़क के किनारे तक ले जाना था। अधिकांश प्रतिभागी शक्ति और स्फूर्ति युक्त लगे और अनेक अपना सामान लेकर नीचे सड़क की ओर तेजी से चल दिये। मैं सावधानी पूर्वक चल रही थी और मैंने अपनी धीमी परंतु संतुलित चाल कायम रखी। मेजर प्रेमचंद ने मुझे देखा और कहा, ''बचेन्द्री यही चाल है जो तुम्हें एवरेस्ट पर रखनी होगी।''

उनके उस कथन का क्या अर्थ था? क्या मैं उम्मीद कर सकती हूँ कि शिविर में मैंने अपना ग्रेड बनाया होगा।

आरोही दल

एवरेस्ट के लिए हमारा भारत की ओर से यहां चौथा अभियान था। पहले दो दल 1960, 1962 में शिखर की 200 और 130 मीटर की ऊंचाई से ही वापस आ गए थे। तीसरे दल में एवरेस्ट पर चढ़ने वाले नौ आरोही थे।

पूरे विश्व के लगभग 170 व्यक्तियों में जिन्होंने एवरेस्ट की चढ़ाई की थी, केवल चार ही महिलाएं थीं। लेकिन भारत की युवा महिलाओं ने अनेक पर्वतों पर अपनी क्षमता दिखाई थी। तीन ने 1981 में "किलर नन्दा देवी" (7816 मी०) की चढ़ाई की थी। अतः इस अभियान का मुख्य उद्देश्य यदि संभव हुआ, एक अथवा अधिक भारतीय महिलाओं को एवरेस्ट शिखर पर देखना था।

मैं एवरेस्ट दल की घोषणा के इंतजार में चिंताग्रस्त थी। मेरा परिवार भी मेरी चिंता से परेशान था और मेरा भाई बचन, जो खुद पर्वतारोही है, विशेष रूप से मुझसे मिलने घर पर आया। दल में लिए जाने की मेरी संभावना हमारी दैनिक चर्चा का विषय था। मुझे अपने प्रदर्शन पर अधिक आशा थी जिसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा मेरे प्रशिक्षकों ने की थी। इसके अतिरिक्त कर्नल प्रेमचन्द्र ने 1981 में न केवल मुझे "एवरेस्ट सामग्री" कह कर पुकारा था बल्कि अभी हाल ही में संकेत दिया था कि मुझे एवरेस्ट दल में शामिल किया जा सकता है।

18 अक्तूबर 1983 के आकाशवाणी के सायंकालीन समाचार बुलेटिन के अनुसार कर्नल डी०के० खुल्लर को एवरेस्ट अभियान दल का नेता चुना गया था और दल के नामों की घोषणा दूसरे दिन प्रातः की जाएगी। मैंने यह समाचार उत्तरकाशी में सुना जहाँ मैं

लड़कियों के प्रारंभिक कोर्स के लिए अतिथि प्रशिक्षक के रूप में निमंत्रित थी।

मैं उस रात बिल्कुल नहीं सो सकी। सूर्योदय से पहले ही उठकर मैं समाचार विक्रेता की दुकान पर घंटों पहले पहुंच गई, जबकि समाचार पत्रों का बंडल लेकर लड़का काफी देर बाद आया। सांस रोके हुए मैंने अखबार की एक प्रति छीनी और कांपते हाथों से उसे खोला। मेरी आंखें अधीरतापूर्वक एवरेस्ट दल की सूची में ऊपर नीचे दौड़ लगा रही थी, जबकि अंतिम रूप से वे उस एक नाम पर आकर ठहर गई जिसकी मुझे तलाश थी। यह



कर्नल खुल्लर

नाम था—"बचेन्द्री पाल" बाद में मुझे मालूम हुआ कि पर्वतारोहण में नौसिखिया होने के बावजूद भी मेरा चयन सर्वसम्मति से हुआ था।

मैं सीधी मिठाई वाले की दुकान पर दौड़ी, कुछ लड्डू खरीदने के बाद मैं कूदकर सामने से आती उस पहली गाड़ी में बैठ गई जो मेरे गाँव की ओर जा रही थी। अपने गाँव के नीचे की सड़क पर जैसे ही मैं ट्रक से उतरी, मैंने ऊपर देखा कि बचन चबूतरे पर मेरा इंतज़ार कर रहा था। वह दौडकर नीचे आया और मुझे बीच रास्ते में मिला। ज़ोर से चिल्लाकर मैंने यह सुखद समाचार उसे पहले ही सुना दिया था। जैसे ही हम मिले, उसनें मुझे गले लगा लिया और खुशी सें नाचने लगा। तब तक पूरा परिवार तथा अन्य व्यक्ति भी इकट्ठे हो गए थे। सबको मिठाई बाँटी गईं। मेरी माँ की आँखों से खुशी के आँसू बह रहे थे और मेरे पिता मेरे सिर को प्यार से सहलाते हुए मेरी तरफ गर्व से देख रहे थे।

छह अन्य महिलाओं का चयन हुआ था। वे सभी मज़बूत और अनुभवी पर्वतारोही थीं। उनकी तुलना में मैं एक नौसिखिया ही थी। कर्नल डी०के० खुल्लर और ले० कर्नल प्रेमचन्द के अलावा दल में ग्यारह अन्य पुरुष थे।



एवरेस्ट आरोही

एवरेस्ट के लिए प्रशिक्षण

ब्रिगेडियर ज्ञान सिह को विश्वास था कि चन्द्रा दीदी और मैं "एवरेस्ट 84" के लिए चुने जायेंगे, और उन्होंने एवरेस्ट पूर्व का एक स्वप्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किया था जिसको हमने दल की घोषणा होते ही शुरू कर दिया। संक्षेप में, प्रशिक्षण में 12 से 15 कि०ग्रा० का बोझ पीठ पर लादकर लगभग 600 मीटर प्रतिदिन चढ़ाई और 8 से 10 कि० मीटर की जागिग अनिवार्य थी।

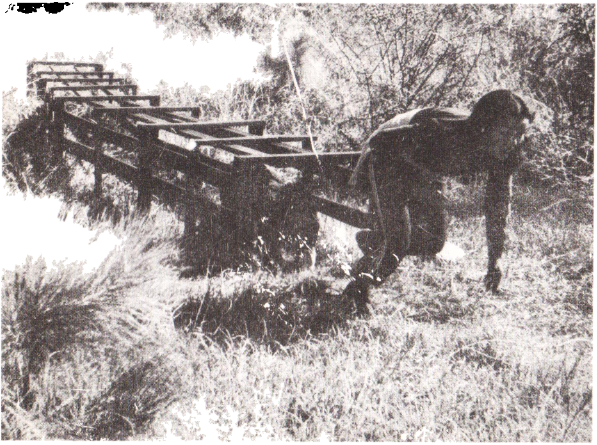
इस कठिन शारीरिक श्रम के लिए हमारा खाना भी विशेष प्रकार का होता था जिसमें प्रोटीन युक्त खाद्य सामग्री जैसे पर्याप्त मात्रा में दूध, हरी सब्जी और शक्कर होती थी, हमारा दैनिक खाना 3500 से 4000 कैलोरी का होता था।

नुकुरी गांव के लोग प्रत्येक सुबह मुझे पत्थरों से भरे बोरे को लेकर पहाड़ी की तलहटी से लेकर चोटी तक चढ़ते हुए देखते और आनंदित होते। किसी ने टिप्पणी भी की कि मैं शायद अक्षय होती हुई पहाड़ियों की ऊंचाई को पुनर्स्थापित करने की कोशिश कर रही हूं। मेरे पिता भी इस मज़ाक में भाग लेते। "बचेन्द्री को बड़ी बड़ी डिग्रियां लेने के बाद भी अपनी पसंद की कोई नौकरी नहीं मिली।" वे स्पष्टीकरण देते हुए कहते, "वह अब स्वयं को एक राजगिरी मज़दूर बनाने के लिए तैयार कर रही है।" वे अपने मुंह के अंदर ही हंसते और इस चुटकुले को हर मिलने वाले को सुनाते। दूसरी तरफ मेरी सीधी सादी माँ अपनी बेटी को पहाड़ की चोटी पर पत्थर ढोते देखकर चिता के आंसू बहाती।

सितम्बर 1983 के प्रारंभ में नयी दिल्ली में हम आई.एम.एफ. में पहुंचीं। लगभग

पाँच सप्ताह तक सात महिला पर्वतारोहियों को थका देने वाला प्रशिक्षण कार्यक्रम दिया गया। हम अपने उदरीय, पृष्ठीय तथा अन्य चढ़ाई वाली मांसपेशियों को मज़बूत बनाने के लिए घंटों जिम्नेसियम में बिताते। शरीर को मोड़ने और फैलाने वाली तथा एक गति से सांस लेने की अनेक कसरतें करनी होती थीं। काफी देर तक तैरने और जोगिंग करने से हमें अपनी शक्ति बढ़ाने में सहायता मिली और अत्यधिक शारीरिक दबावों के अंतर्गत आक्सीजन के अधिकतम उपयोग के लिए फेफड़ों की कार्य प्रणाली का विकास हुआ।

तभी जनवरी 1984 की कड़कती सर्दियों में, ले०क० प्रेम चन्द जो एक सख्त किस्म के प्रशिक्षक थे, हम सब महिलाओं को लेकर गुलमर्ग गये और एक महीने तक उन्होंने हमें गहरे बर्फ से ढकी पहाड़ियों पर चढ़ने और उनके सीधे ढलानों पर से उतरने का अभ्यास कराते रहे।



प्रशिक्षण : बाधाओं को पार करते हुए

ब्रिगेडियर ज्ञान सिंह को आर्थिक आजादी की मेरी इच्छा की जानकारी थी जिससे कि मैं अपने पर्वतारोहण की अपनी रुचि को आगे बढ़ा सकूं। जून 1983 के ''सात बहनों'' के कार्यक्रम के तुरन्त पश्चात ही उन्होंने जमशेदपुर में ''टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी'' (टिस्को) से सम्पर्क किया और मेरे साहसिक कार्य की उन्नति के लिए मुझे अपने वहां नौकरी देने के लिए उनको सहमत किया। एवरेस्ट दल में ले लिए जाने से मुझे इस कार्य में मदद मिली और मुझे ''स्पोर्टस् असिस्टेंट'' का कार्य मिल गया। इसके बाद मैं इस कंपनी की वेतन सूची में रही और मुझे एवरेस्ट अभियान में भाग लेने के लिए अच्छा खासा दैनिक भत्ता भी मिलता रहा।

मैं अब अभियान और शिखर पर पहुंचने के बारे में ही अपना ध्यान केन्द्रित कर सकती थी।

एवरेस्ट - मेरा प्रथम अभियान

एवरेस्ट अभियान दल 7 मार्च को दिल्ली से काठमाँडू के लिए हवाई जहाज़ से चल दिया। एक मजबूत अग्रिम दल बहुत पहले ही चला गया था जिससे कि वह हमारे ''बैस कैम्प'' पहुंचने से पहले दुर्गम हिमपात के रास्ते को साफ कर सके।

काठमाँडू में कुछ दिन बिताने के पश्चात हम जीरी चले गये जो वहाँ चार पाँच घण्टे की यात्रा पर था। तब हमने नमचे बाजार तक की आठ दिन की यात्रा आराम से की। पर्वतों के स्वभाव के विपरीत, हम रोज़ लगभग एक हज़ार मीटर ऊपर नीचे चढ़ते उतरते, जिससे हममें मज़बूती आई और ऊंचाईयों के वातावरण एवं जलवायु के अनुकूल स्वयं को ढालने में हमें मदद मिली। रास्ते में हमें हंसमुख और मैत्रीपूर्ण व्यवहार के साथ उस क्षेत्र के व्यक्ति, विशेषतः शेरपा मिले।

नमचे बाज़ार, शेरपालैंड का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण नगरीय क्षेत्र है। अधिकांश शेरपा इसी स्थान तथा यहीं के आसपास के गांवों के होते हैं। यह नमचे बाजार ही था, जहाँ से मैंने सर्वप्रथम एवरेस्ट को निहारा जो नेपालियों में ''सागरमाथा'' के नाम से प्रसिद्ध है। मुझे यह नाम अच्छा लगा।

एवरेस्ट की तरफ गौर से देखते हुए, मैंने एक भारी बर्फ का एक बड़ा फूल (प्लूम)देखा जो पर्वत शिखर पर लहराता एक ध्वज सा लग रहा था। मुझे बताया गया कि यह दृश्य शिखर की ऊपरी सतह के आसपास 150 किलोमीटर अथवा इससे भी

अधिक की गति से हवा चलने के कारण बनता था, क्योंकि तेज हवा से सूखा बर्फ पर्वत उड़ता रहता था। बर्फ का यह ध्वज 10 किलोमीटर या इससे भी लंबा हो सकता था। शिखर पर जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को दक्षिण पूर्वी पहाड़ी पर इन तूफानों को झेलना पड़ता था, विशेषकर खराब मौसम में। यह मुझे डराने के लिए काफी था, फिर भी मैं एवरेस्ट के प्रति विचित्र रूप से आकर्षित थी और इसकी कठिनतम चुनौतियों का सामना करना चाहती थी।

हम पर्वतीय लोग सदा से पर्वतों की पूजा करते आये हैं। अतः इस भयमिश्रित प्रेरणास्पद दृश्य के प्रति मेरे ऊपर हावी भावना एक प्रकार से श्रद्धाभाव की थी। मैंने अपने हाथ जोड़े, और सागरमाथा की तरफ श्रद्धा से सर झुकाया।

एक दिन के पश्चात हम प्रसिद्ध थ्यांग बोके मठ पर पहुंचे जहाँ मूर्तिमान थामा ने हमें आशीर्वाद दिया और हमारी सफलता तथा सुरक्षित वापसी के लिए प्रार्थना की। थ्यांग बोके न केवल सुन्दर था वरन् इसकी 4000 मीटर से भी अधिक की ऊंचाई हमारी जलवायु अनुकूलता प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त थी। हम फेरीचा में अपने मुख्य जलवायु-अनुकूलता-प्रशिक्षण-शिविर में जाने से पूर्व यहाँ पर दो दिन रुके।



एवरेस्ट गिरि-पिंड

खतरनाक खुम्भु हिमपात

जब हम 26 मार्च को पैरिच पहुंचे, हमें हिम स्खलन के कारण हुई एक शेरपा कुली की मृत्यु का दुःखद समाचार मिला। खुम्भु हिमपात पर जाने वाले अभियान दल के रास्ते के बाँई तरफ सीधी पहाड़ी के एक धसकन, ल्होला से एक बहुत बड़ी बर्फ की चट्टान नीचे खिसक आई थी। सोलह शेरपा कुलियों के दल में से एक की मृत्यु हो गई थी और चार घायल हो गए थे।

इस समाचार के कारण अभियान दल के सदस्यों के चेहरों पर छाए अवसाद को देखकर, हमारे नेता, कर्नल खुल्लर ने स्पष्ट किया कि एवरेस्ट जैसे महान अभियान में खतरों को और कभी-कभी तो मृत्यु को भी आदमी को सहज भाव से स्वीकार करना चाहिए। ''हमें एक अकेली दुर्घटना से अकारण ही परेशान और विचलित नहीं होना चाहिए।'' उन्होंने कहा।

उपनेता प्रेमचन्द, जो अग्रिम दल का नेतृत्व कर रहे थे, 26 मार्च को पैरिच लौट आए। उन्होंने हमारी पहली बड़ी बाधा खुम्भु हिमपात, की स्थिति से हमें अवगत कराया। उन्होंने कहा कि उनके दल ने कैम्प-I (6000 मी०) जो हिमपात के ठीक ऊपर है, तक का रास्ता साफ कर दिया है। उन्होंने यह भी बताया कि पुल बनाकर रस्सियाँ बाँधकर तथा झंडियों से रास्ता चिन्हित कर सभी बड़ी कठिनाइयों का जायज़ा ले लिया गया है। उन्होंने इस पर भी ध्यान दिलाया कि ग्लेशियर बर्फ की नदी है और बर्फ का गिरना अभी जारी है। हिमपात में अनियमित और अनिश्चित बदलाव के कारण अभी तक के किए गए सभी काम व्यर्थ हो सकते हैं और हमें रास्ता खोलने का काम दोबारा



हिमपात

करना पड़ सकता है। इन बाधाओं से परिचित होने से मेरे अन्दर भय की बजाये जिज्ञासा अधिक प्रबल थी। लेकिन मैंने अपनी भावनाओं को अन्य सभी से छिपा कर रखा।

बेस कैम्प में पहुंचने से पहले हमें एक और मृत्यु की खबर मिली। जलवायु अनुकूल न होने के कारण एक रसोई सहायक की मृत्यु हो गई थी। निश्चित रूप से हम आशाजनक स्थिति में नहीं चल रहे थे।

एक रात के लिए हम गोरखशेप में रुके जहाँ से मैं एक छोटी सी जलवायु-अनुकूलन चढ़ाई के लिए ''काला पत्थर'' गई। यहाँ से मुझे एवरेस्ट, साउथ कोल, ल्होत्से और हिमपात का दृश्य साफ नज़र आता था। यह एक भय मिश्रित प्रेरणादायक दृश्य था। सागरमाथा दूसरी बार देखने पर मेरी भावना फिर से श्रद्धायुक्त थी। फिर मैंने अपने हाथ जोड़े और अपना सिर झुकाया।

एवरेस्ट शिखर को मैंने पहले दो बार देखा था लेकिन एक दूरी से। बेस कैम्प पहुंचने पर दूसरे दिन मैंने एवरेस्ट पर्वत तथा इसकी अन्य श्रेणियों को देखा। मैं भौंचक्की होकर खड़ी रह गई और एवरेस्ट, ल्होत्से और नुत्से की ऊंचाइयों से घिरी, बर्फीली टेढ़ी मेढ़ी नदी को निहारती रही। हमने देखा कि खुम्भु ग्लेशियर हमारी बांई ओर एवरेस्ट की पश्चिमी श्रृंखला के लगभग सीधी ढलानों और हमारी दाईं ओर नुत्से की श्रृंखला के बीच से बहते हुए, एक किलोमीटर से कम की दूरी में ही, लगभग 600 मीटर नीचे तक चला गया है। ऊंचाई की तीव्र ढाल बर्फ के गिरने का कारण बनी। इसके पीछे का दृश्य विश्व के चौथे सर्वोच्च पर्वत ल्होत्से का किलेनुमा कगूरेदार शिखर था। तेज तूफानी पश्चिमी हवा का सामना करते हुए ल्होत्से पर्वत की चोटी पर बर्फ नहीं ठहर सकता था। इसका चट्टानी ताज इसलिए स्लेटी काले रंग का था।

हिमपात अपने आप में एक तरह से बर्फ के खंडों का अव्यवस्थित ढंग से गिरना ही था। हमें बताया गया कि ग्लेशियर के बहने से अक्सर बर्फ मे हलचल हो जाती थी, जिससे बड़ी-बड़ी बर्फ की चट्टानें तत्काल गिर जाया करती थीं और अन्य कारणों से भी अचानक प्राय: खतरनाक स्थिति धारण कर लेती थी। सीधे धरातल पर दरार पड़ने का विचार और इस दरार का गहरे चौड़े हिम-विदर में बदल जाने का मात्र ख्याल ही बहुत डरावना था। इससे भी ज्यादा भयानक इस बात की जानकारी थी कि हमारे संपूर्ण प्रवास के दौरान हिमपात लगभग एक दर्जन आरोहियों और कुलियों को प्रतिदिन छूता रहेगा।

कैम्प-I (6000 मी०) हिमपात से ऊपर लगाया गया था। ''वैस्टर्न कूम'' के नाम से



विस्तृत हिम विदर से निकलते हुए

विख्यात हिम विदर युक्त ऊंची घाटी के लगभग 500 मी० ऊपर तक कुछ घंटों की लगातार चढ़ाई के बाद हम कैम्प-II पहुंच गए, जो हमारा अग्रिम बेस था। कैम्प-III (7200 मी०) ल्होत्से के सामने खुले क्षेत्र में था और कैम्प-IV साउथ कोल (7900 मी०) में एवरेस्ट और ल्होत्से के बीच तूफानी, ठंडे और कड़े स्थल पर आखिरी बेस था। लगभग 8500 मीटर पर्वत चोटी तक जाने वाली दक्षिण पूर्वी पहाड़ी पर एक धोलदारी कैम्प लगाना आवश्यक था।

मैं हिमपात के पास पहुंचने के लिए छटपटा रही थी। उसी शाम अन्य साथियों के साथ काँटे के उस स्थान तक पहुंच गई जहाँ से हिमपात शुरू होता था। यह वह स्थान था जहाँ पर पर्वतारोहियों ने अपने जूतों और कोटों के फीते कसे अथवा 10 से 12 कीलों वाले उपकरण पहने जिससे कि पिघलती या जमी हुई बर्फ पर फिसलने से बचा जा सके।

दूसरे दिन नये आने वाले अधिकांश अपने सामान को हिमपात के आधे रास्ते तक ले गए। डा० मीनू मेहता ने हमें अल्मूनियम की सीढ़ियों से अस्थायी पुलों का बनाना, लट्ठों और रस्सियों का उपयोग, बर्फ की आड़ी तिरछी दीवारों पर रस्सियों को बाँधना, और हमारे अग्रिम दल के अभियान्त्रिकी कार्यों के बारे में हमें विस्तृत जानकारी दी।

तीसरा दिन हिमपात से कैम्प-I तक सामान ढो कर चढ़ाई का अभ्यास करने के लिए निश्चित था। रीता गोम्बू तथा मैं साथ-साथ चढ़ रहे थे। हमारे पास एक वॉकी-टॉकी था, जिससे हम अपने हर कदम की जानकारी बेस कैम्प पर दे रहे थे। कर्नल खुल्लर उस समय बहुत खुश हुए जब हमने उन्हें अपने पहुंचने की सूचना दी, क्योंकि कैम्प I पर पहुंचने वाली केवल हम दो हीं थी।

जब हमें उस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति के बारे में बता दिया गया, मैंने देखा कि बलगेरियन अभियान दल का बेस-कैम्प हमारे कैम्प से दूसरा ही था। वे लोग दुर्गम पश्चिमी पहाड़ी के रास्ते से चढ़ रहे थे और शिखर से हमारे रास्ते से लौटकर आने वाले थे। हमें बाद में मालूम हुआ कि पांच बलगेरियन शिखर तक पहुंचे, परन्तु इसके लिए उनको काफी भारी कीमत चुकानी पड़ी। उनके पहले शिखर आरोही, क्रिस्टो प्रोडोनो ने अकेले आक्सीजन रहित चढ़ाई पूरी की। लेकिन उतरते वक्त वह कहीं रास्ते में ही ऊंचाई पर समाप्त हो गया।

रास्तों को खोलने तथा ऊंचे शिविरों के लिए सामान इकट्ठा करने का काम काफी लम्बा और कठिन था। छोटे छोटे समूहों अथवा कभी कभी दो दो के जोड़ों में काम करते

हुए हमने रस्सियों से रास्ता बनाया, पाँव रखने की जगह और हाथ पकड़ने के छेद बनाये। कैम्प-II तथा III ठीक समय पर बन गये। अंग दोरजी, लोपसांग, और मगन बिस्सा अन्ततः साउथ कोल पहुंच गये और 29 अप्रैल को 7900 मीटर पर उन्होंने कैम्प-IV लगाया। यह संतोषजनक प्रगति थी।

जब अप्रैल में मैं बेस कैम्प में थी, तेनजिंग अपनी सबसे छोटी सुपुत्री डेकी के साथ हमारे पास आये थे और उन्होंने इस बात पर विशेष महत्व दिया कि दल के प्रत्येक सदस्य और प्रत्येक शेरपा कुली से बातचीत की जाये। जब मेरी बारी आई, मैंने अपना परिचय यह कह कर दिया कि मैं बिल्कुल ही नौसिखिया हूं और एवरेस्ट मेरा पहला अभियान है। तेनजिंग हँसे और मुझसे कहा कि एवरेस्ट उनके लिए भी पहला अभियान है, लेकिन यह भी स्पष्ट किया कि शिखर पर पहुंचने से पहले उन्हें सात बार एवरेस्ट पर जाना पड़ा था। फिर अपना हाथ मेरे कंधे पर रखते हुए, उन्होंने कहा, ''तुम एक पक्की पर्वतीय लड़की लगती हो, तुम्हें तो शिखर पर पहले ही प्रयास में पहुंच जाना चाहिए। ये शब्द ही मेरे साथी बने।

आरोहण योजना की शुरूआत

एक मई तक आरोहण योजना को शुरू करने की पूरी तैयारी हो चुकी थी। साउथ कोल के लिए निर्धारित ऑक्सीजन और अन्य उपकरणों की बीस में से बारह खेप आ चुकी थीं। आवश्यक सामान की खेप लेकर एक बहुत बड़ी तारण की पहले शिखर दल के साथ जाने की आशा थी।

कर्नल खुल्लर ने साउथ कोल तक की चढ़ाई के लिए तीन शिखर दलों की दो पार्टियां बनाकर काफी काम हल्का करने का निश्चय किया। इन दलों को 5 और 6 मई को बेस कैम्प से चलना था। प्रेम चन्द, रीता फू दोरजी, चन्द्रप्रभा और सीरदार अंग दोरजी का पहला दल 7 मई को साउथ कोल पहुंच गया। 8 मई को प्रेम चन्द, रीता और अंग दोरजी का पहला शिखर दल बनना था। उनको शिखर पर पहुंचने का प्रयास करना था, और शाम तक साउथ कोल वापस आना था। उसी दिन (8 मई) फू दोरजी, चन्द्रप्रभा तथा आठ शेरपाओं के दूसरे शिखर दल ने लगभग 8500 मीटर की ऊंचाई पर शिखर कैम्प-IV की स्थापना करनी थी। उनको रात में वहीं रुकना था और दूसरे दिन सुबह चोटी पर चढ़ने का प्रयास कर, शाम तक साउथ कोल लौटना था। तीसरे शिखर दल में एन०डी० शेरपा, लोपसांग, तशारिंग, मगन बिस्सा और मैं साथ थी। और हमें 8 मई को साउथ कोल पहुंचकर 9 मई को चोटी पर पहुंचने का प्रयास करना था। इस महत्वाकांक्षी योजना की सफलता साउथ कोल तथा शिखर कैम्पों के लिए पर्याप्त शेरपाओं के मिलने पर निर्भर करती थी।

लेकिन यह नहीं होना था। निर्धारित आठ की बजाय केवल दो शेरपा ही फू दोरजी

और चन्द्रप्रभा के साथ जा सके। इसलिए प्रेम चन्द ने अपने दल के द्वारा केवल एक ही प्रयास करने का निश्चय किया और शिखर प्रयास के लिए अपना स्थान फू दोरजी को दे दिया। चन्द्रप्रभा उनके साथ साउथ कोल लौट आई। फू दोरजी शिखर कैम्प पर रात बिताने के लिए रीता और अंग दोरजी के साथ शामिल हो गए।

इन तीनों ने 9 मई को प्रातः सात बजे शिखर कैम्प से प्रस्थान किया। एक घंटे की चढ़ाई के उपरान्त अंग दोरजी को लगा कि उनके पैर बहुत ठंडे होते जा रहे हैं। तुषारदंश के डर से उन्होंने वापस लौटने का निश्चय किया। रीता जो उनके साथ गई थी, दुविधा में थी। फू दोरजी लगभग 20 मीटर आगे खड़े इंतजार कर रहे थे कि शायद वह उनके साथ ऊपर चढ़ना चाहे। मौसम की अनिश्चितता (80 कि० मी० प्रति घंटे की रफ्तार से हवा चल रही थी और महीन मेघाच्छादित धुंध छाई हुई थी) के कारण, रीता ने भी लौटने का निश्चय कर लिया।

जब वे अपने लक्ष्य से केवल 200 मीटर ही पीछे थे, फू दोरजी की ऑक्सीजन समाप्त हो गई। लेकिन उनका दृढ़ संकल्प और क्षमता असाधारण थी। अपने उपकरणों को वहीं छोड़कर वे बढ़ते ही गए आर दोपहर के साढ़े बारह बजे वे शिखर पर थे। इस आसाधारण साहसिक उपलब्धि ने भारत के शिखर अभियान दल को एवरेस्ट की पहली ऑक्सीजन रहित चढ़ाई का श्रेय दिया।

हमारे दल ने 8 मई को कैम्प-III मे साउथ कोल तक अविरल प्रगति की। मैं गैस की कमी के कारण ऑक्सीजन के बगैर ही चढ़ाई कर रही थी। जब साउथ कोल पहुंचने के लिए मेरा एक घंटे का सफर बाकी था, मुझे चलने में भारीपन महसूस होने लगा और मेरी चाल मंद पड़ गई थी। विशेषकर इसलिए भी क्योंकि यह चढाई का सबसे अधिक ढलाऊ हिस्सा था और बर्फीली हवा चलनी शुरू हो गई थी। तभी मैंने जनेवा स्पर के साथ किसी को नीचे आते देखा और आश्चर्य किया कि इतनी देर गए साउथ कोल से कौन नीचे जा रहा है। ये एन०डी० शेरपा थे, जो मेरे लिए ऑक्सीजन का सिलेंडर लेकर आ रहे थे। मैं इस सौहार्दपूर्ण कार्य से अत्यधिक द्रवित हो उठी। ऑक्सीजन मिलने से चढ़ाई बहुत आसान हो गई।

इस दौरान बल्गेरिया का पहला जोड़ा जिन्होंने पश्चिमी पहाड़ी के रास्ते से शिखर की चढ़ाई की थी, साउथ कोल के रास्ते से चढ़ाई पूरी करने में 24 घंटे से भी अधिक पीछे था। शिखर से लौटते समय फू दोरजी ने उस थके हुए बलगेरियन जोड़े की मदद की और

हमारे नेता ने 9 मई की अपने दल की यात्रा रद्द कर दी जिससे कि एन०डी० और लोपसांग को उस दल के बचाव कार्य में लगाया जा सके। इसलिए दल के हम बाकी लोग कैम्प-II में वापस आ गए।



साउथ कोल : कैम्प-IV

एक भाग्यवान रात

15-16 मई 1984 को बुद्ध पूर्णिमा के दिन मैं ल्होत्से की बर्फीली सीधी ढलान पर लगाये गये सुंदर रंगीन नाइलोन के बने तम्बू के कैम्प-III में थी। कैम्प में 10 और व्यक्ति थे। लोपसांग, तशारिंग मेरे तम्बू में थे, एन०डी० शेरपा तथा आठ अन्य शरीर से मजबूत और उंचाइयों में रहने वाले शेरपा दूसरे तम्बुओं में थे। मैं गहरी नींद में सोई हुई थी कि रात में 12-30 बजे के लगभग मेरे सिर के पिछले हिस्से में एक किसी सख्त चीज के टकराने से मेरी नींद अचानक खुली और साथ ही एक ज़ोरदार धमाका भी हुआ। तभी मुझे महसूस हुआ कि एक ठंडी बहुत भारी कोई चीज मेरे शरीर पर से मुझे कुचलती हुई चल रही है। मुझे साँस लेने में भी कठिनाई हो रही थी।

यह क्या हो गया था? एक लम्बा बर्फ का पिंड हमारे कैम्प के ठीक ऊपर ल्होत्से ग्लेशियर से टूट कर नीचे आ गिरा था और उसका विशाल हिम पुंज बना गया था। हिम खंडों, बर्फ के टुकड़ों, तथा जमी हुई बर्फ के इस विशालकाय पुंज ने, एक एक्सप्रेस रेलगाड़ी की तेज गति और भीषण गर्जना के साथ, सीधी ढलान से नीचे आते हुए, हमारे कैम्प को तहस नहस कर दिया। वास्तव में हर व्यक्ति को चोट लगी थी। यह एक आश्चर्य था कि किसी की मृत्यु नहीं हुई थी।

लोपसांग अपनी स्विस छुरी की मदद से हमारे तम्बू का रास्ता साफ करने में सफल हो गये थे और तुरन्त ही अत्यंत तेजी से मुझे बचाने की कोशिश में लग गये। थोड़ी सी भी देर का सीधा अर्थ था मृत्यु। बड़े बड़े हिमपिंडों को मुश्किल से हटाते हुए उन्होंने मेरे चारों तरफ के कड़े जमे बर्फ की खुदाई की और मुझे उस बर्फ की कब्र से बाहर खींच लाने में सफल हो गये।

रसोई के अतिरिक्त कोई भी तम्बू अपनी स्थिति में खड़ा नहीं था। लोपसांग और मैं रसोई के ऊपर किसी तरह से चढ़े और हमने देखा कि एन०डी० कैम्प-II के नेता से वॉकी-टॉकी पर बात कर रहे थे। एन०डी० ने बताया कि उनकी कुछ पसलियां टूट गई हैं। एक शेरपा की टांग की हड्डी टूट गई थी और बाकी सब को चोटें आई थीं। दर्द की कराहट और मदद के लिए चिल्लाहट सभी तरफ से सुनाई दे रही थी। लेकिन एन०डी० ने कैम्प-II के नेता को आश्वस्त किया कि सभी कुछ समाप्त नहीं हुआ है। अभियान दल में अभी आगे बढ़ने में काफी दमखम है।

अब तक हम में से काफी लोग रसोई के तम्बू के पास एकत्र हो गये थे। मैंने अपने प्राथमिक चिकित्सा के थैले में से सभी को दर्दनाशक गोलियां दीं और गर्म पेय बनाया। मैं किसी की मदद कर सकती थी—इस विचार से ही मेरे ऊपर से निराशा और अवसाद के बादल छंट गये।

नेता ने शीघ्र ही सुरक्षा दल भेजने का वायदा किया। की, जय और बिस्सा, कैम्प-I पर अपनी वॉकी टॉकी पर हमारी बातचीत सुनकर तुरन्त ही रवाना हो गये, यद्यपि अभी

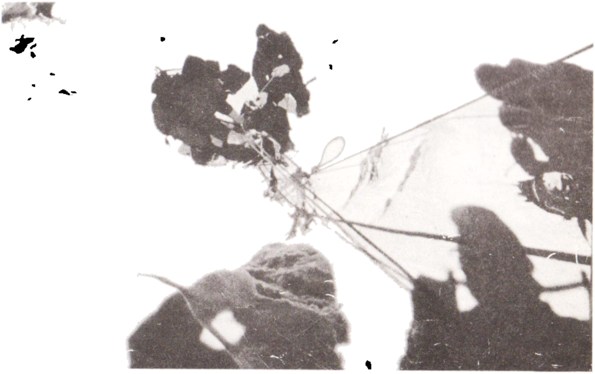


हिम स्खलन के बाद कैम्प-III की स्थिति

भी रात थी। कैम्प-II से भी चार आदमियों का सुरक्षा दल और कैम्प-II का रसोइया सक्रिय हो गया।

तड़का होने से पूर्व ही हमने अपने उपकरण निकालने शुरू कर दिये। मुझे देवी दुर्गा के उस चित्र की बहुत अधिक चिंता थी जो मेरे थैले में था। प्रत्येक सुबह शाम मैं इसे निकालती थी और इसी से शक्ति और प्रेरणा ग्रहण करती थी। थैला मिलते ही मेरा पहला काम उसकी साइड की जेब में हाथ डालना था। मेरी उंगलियां बर्फ से ठंडे हुए धातु से बने उस चित्र से जब टकराईं तो मुझे काफी राहत मिली। मैंने उस पवित्र चित्र को कस कर पकड़ा और अपने माथे से लगाया। मुझे लगा कि मुझे सब कुछ मिल गया था। मेरे हाथों मे शक्ति थी। शक्ति, जिसने कुछ घंटों पूर्व मेरे जीवन की रक्षा की थी और वही शक्ति, मुझे विश्वास था कि अब आगे ही आगे ले जायेगी। रात के अनुभव से मेरा सारा डर अब निकल गया था।

तभी सारे सुरक्षा दल आ गये थे और 16 मई के प्रातः 8 बजे तक हम प्रायः सभी कैम्प-II पर पहुंच गये थे। जिस शेरपा की टांग की हड्डी टूट गई थी, उसे एक खुद के



घायल साथी को बचाते हुये

बनाये स्ट्रेचर पर लिटा कर नीचे लाये। हमारे नेता खुल्लर के शब्दों में, ''यह इतनी ऊंचाई पर सुरक्षा कार्य का एक जबर्दस्त साहसिक कार्य था।''

मेरे सिर के पिछले हिस्से में बने गूमड़े में अब दर्द होने लगा था। मुझे काफी तकलीफ महसूस हो रही थी, परन्तु मैंने स्वयं को सन्तुलित कर रखा था, कभी कभी अपनी हथेली से उस गूमड़े को दबाती रहती थी।

सभी नौ पुरुष सदस्यों को चोटों अथवा टूटी हड्डियों आदि के कारण बेस कैम्प में भेजना पड़ा। तभी कर्नल खुल्लर मेरी तरफ मुड़ कर कहने लगे, ''क्या तुम भयभीत थीं?''

''जी हां''

''क्या तुम वापिस जाना चाहोगी?''

''नहीं''—मैंने बिना किसी हिचकिचाहट के उत्तर दिया।



ऊँचाई पर आक्सीजन मुखौटा लगाकर सोते हुए

रहस्यपूर्ण नाटक

की कुमार, जय बहुगुणा, मगन बिस्सा और डा० मीनू मेहता को मिलाकर अगला शिखर दल बनना था। महत्वपूर्ण महिला प्रतिभागी होने के नाते मुझे विशेष अधिकार दिया था। ल्हाटू, पुलजर और सभी उपलब्ध उच्च स्थानवासी शेरपाओं को सहायकों की भूमिका निभानी थी। अपने साधनों को देखते हुए, सहायक दल को प्रथम शिविर दल के उपरान्त ही प्रयत्न करना था और दूसरे दल में किसी महिला को नहीं लेना था।

अन्तिम चढ़ाई के लिए ऑक्सीजन संरक्षित करने की दृष्टि से सभी पुरुष सदस्यों को साउथ कोल तक बिना ऑकसीजन के जाना था। लेकिन, जब बिस्सा के पैर आधी चढ़ाई के बाद ही ठंडे पड़ गये, उसे ऑक्सीजन लेने की सलाह दी गई। मुझे अगले दिन की अंतिम चढ़ाई के लिए उर्जा संरक्षित करने की दृष्टि से दो लीटर प्रति मिनट के औसत से ऑक्सीजन लेने को कहा गया। साउथ कोल पहुंचने पर और चढ़ाई के दिन मेरी स्वस्थता को देखते हुए यह सिद्ध हो गया कि यह निर्णय बुद्धिमत्तापूर्ण ही था।

जैसे ही मैं साउथ कोल कैम्प पहुंची, मैंने अगले दिन की अपनी महत्वपूर्ण चढ़ाई की तैयारी शुरू कर दी। मैंने खाना, कुकिंग गैस, तथा कुछ ऑक्सीजन सिलिंडर इकट्ठे किये। जब दोपहर डेढ़ बजे बिस्सा आया, उसने मुझे चाय के लिए पानी गर्म करते देखा। की, जय और मीनू अभी बहुत पीछे थे। मैं चिन्तित थी क्योंकि मुझे अगले दिन उनके साथ ही चढ़ाई करनी थी। वे धीरे धीरे आ रहे थे क्योंकि वे भारी बोझ लेकर और बिना ऑक्सीजन के चल रहे थे।

दोपहर बाद मैंने अपने दल के दूसरे सदस्यों की मदद करने और अपने एक थरमस को जूस से और दूसरे को गरम चाय से भरने के लिए नीचे जाने का निश्चय किया। मैंने बर्फीली हवा में ही तम्बू से बाहर कदम रखा।

जैसे ही मैं कैम्प क्षेत्र से बाहर आ रही थी मेरी मुलाकात मीनू से हुई। की और जय अभी कुछ दूर पीछे थे। मुझे जय जेनेवा स्पर की चोटी के ठीक नीचे मिला। उसने कृतज्ञता पूर्वक चाय वगैरह पी लेकिन मुझे और आगे जाने से रोकने की कोशिश की। लेकिन मुझे की से भी मिलना था। थोड़ा सा और आगे नीचे उतरने पर मैंने की को देखा। वह मुझे देखकर हक्का-बक्का रह गया। "तुमने इतनी बड़ी जोखिम क्यों ली, बचेन्द्री?" मैंने उसे दृढ़तापूर्वक कहा कि "मैं भी औरों की तरह एक पर्वतारोही हूं। इसीलिए इस दल में आई हूं। शारीरिक रूप से मैं ठीक हूं, इसलिए मुझे अपने दल के सदस्यों की मदद क्यों नहीं करनी चाहिए।" की, हँसा और उसने पेय पदार्थ से प्यास बुझाई। लेकिन उसने मुझे अपना किट ले जाने नहीं दिया।

थोड़ी देर बाद साउथ कोल कैम्प से ल्हाटू और बिस्सा हमें मिलने नीचे उतर आए। और हम सब साउथ कोल पर जैसी भी सुरक्षा और आराम की जगह उपलब्ध थी, उस पर लौट आए। साउथ कोल "पृथ्वी पर बहुत अधिक कठोर" जगह के नाम से प्रसिद्ध है।



खाना गर्म करते हुए

एवरेस्ट के साथ मेरी भेंट

मैं सुबह चार बजे उठ गई, बर्फ पिघलाया और चाय बनाई। कुछ बिस्कुट और आधी चॉकलेट का हल्का नाश्ता करने के बाद मैं लगभग साढ़े पाँच बजे अपने तम्बू से निकल पड़ी। अंग दोरजी बाहर खड़ा था। और कोई आसपास नहीं था।

अंग दोरजी बिना ऑक्सीजन के ही चढ़ाई करने वाला था। लेकिन इसके कारण, उसके पैर ठंडे पड़ जाते थे। इसलिए वह ऊंचाई पर लम्बे समय तक खुले में और रात्रि में शिखर कैम्प पर नहीं जाना चाहता था। इसलिए उसे या तो उसी दिन चोटी तक चढ़कर साउथ कोल पर वापस आ जाना था अथवा अपने प्रयास को छोड़ देना पड़ता था।

वह तुरंत ही चढ़ाई शुरू करना चाहता था। और उसने मुझसे पूछा क्या मैं उसके साथ जाना चाहूंगी? एक ही दिन में साउथ कोल में चोटी तक जाना और वापस आना बहुत कठिन और श्रमसाध्य होगा। इसके अलावा यदि अंग दोरजी के पैर ठंडे पड़ गये तो उसके लौट कर आने का भी जोखिम था। मुझे फिर भी अंग दोरजी पर विश्वास था और साथ साथ मैं अपनी आरोहण की क्षमता और कर्मठता के बारे में भी आश्वस्त थी। अन्य कोई भी व्यक्ति इस समय साथ चलने के लिए तैयार नहीं था।

सुबह 6.20 पर जब अंग दोरजी और मैं साउथ कोल से बाहर निकले तो दिन ऊपर चढ़ आया था। हल्की हल्की हवा चल रही थी लेकिन ठंड भी बहुत अधिक थी। मैं अपने आरोही उपस्कर में काफी सुरक्षित और गर्म थी। हमने बगैर रस्सी के ही चढ़ाई की। अंग

दोरजी एक निश्चित गति से ऊपर चढ़ते गए और मुझे भी उनके साथ चलने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

जमें हुए बर्फ की सीधी व ढलाऊ चट्टानें इतनी सख्त और भुरभुरी थीं मानों शीशे की चादरें बिछी हों। हमें बर्फ काटने के फावड़े का इस्तेमाल करना पड़ा और मुझे इतनी सख्ती से फावड़ा चलाना पड़ा जिससे कि उस जमें हुए बर्फ की धरती को फावड़े के दांते काट सकें। मैंने उन खतरनाक स्थलों पर हर कदम अच्छी तरह सोच समझ कर उठाया।

दो घंटे से कम समय में ही हम शिखर कैम्प पर पहुंच गए। अंग दोरजी ने पीछे मुड़कर देखा और मुझसे कहा कि क्या मैं थक गई हूं। मैंने जवाब दिया, "नहीं", जिसे सुनकर वे बहुत अधिक आश्चर्यचकित और आनंदित हुए। उन्होंने कहा कि पहले वाले दल ने शिखर कैम्प पर पहुंचने में चार घंटे लगाए थे और यदि हम इसी गति से चलते रहे तो हम शिखर पर दोपहर एक बजे तक पहुंच जाएंगे।

ल्हाटू हमारे पीछे पीछे आ रहा था और जब हम दक्षिणी शिखर के नीचे आराम कर रहे थे वह हमारे पास पहुंच गया। थोड़ी थोड़ी चाय पीने के बाद हमने फिर चढ़ाई शुरू की। ल्हाटू एक नायलौन की रस्सी लाया था, इसलिए अंग दोरजी और मैं रस्सी के सहारे चढ़े, जबकि ल्हाटू एक हाथ से रस्सी पकड़े हुए बीच में चला। उसने रस्सी अपनी सुरक्षा की बजाय हमारे संतुलन के लिए पकड़ी हुई थी। ल्हाटू ने ध्यान दिया कि मैं इन ऊंचाइयों के लिए सामान्यत: आवश्यक, चार लीटर ऑक्सीजन की अपेक्षा, लगभग ढाई लीटर ऑक्सीजन प्रति मिनट की दर से लेकर चढ़ रही थी। मेरे रेगुलेटर पर जैसे ही उसने ऑक्सीजन की आपूर्ति बढ़ाई मुझे महसूस हुआ कि सपाट और कठिन चढ़ाई भी अब आसान लग रही थी।

दक्षिणी शिखर के ऊपर हवा की गति बढ़ गई थी। उस ऊंचाई पर तेज हवा के झौंके भुरभुरे बर्फ के कणों को चारों तरफ उड़ा रहे थे जिससे दृश्यता शून्य तक आ गई थी। अनेक बार देखा कि केवल थोड़ी दूर के बाद कोई ऊंची चढ़ाई नहीं है। ढलान एक दम सीधा नीचे चला गया है।

मेरी सांस मानो रुक गई थी। मुझे विचार कौंधा कि सफलता बहुत नजदीक है। 23 मई 1984 के दिन दोपहर के एक बज कर सात मिनट पर मैं एवरेस्ट की चोटी पर खड़ी थी। एवरेस्ट की चोटी पर पहुंचने वाली मैं प्रथम भारतीय महिला थी।



शिखर पर

सागरमाथा के प्रति श्रद्धाभाव

एवरेस्ट शंकु की चोटी पर इतनी जगह नहीं थी कि दो व्यक्ति साथ साथ खड़े हो सकें। चारों तरफ हज़ारों मीटर लम्बी सीधी ढलान को देखते हुए हमारे सामने प्रश्न सुरक्षा का था। हमने पहले बर्फ के फावड़े से बर्फ की खुदाई कर अपने आप को सुरक्षित रूप से स्थिर किया। इसके बाद, मैं अपने घुटनों के बल बैठी, बर्फ पर अपने माथे को लगाकर मैंने सागरमाथे के ताज का चुम्बन लिया। बिना उठे ही मैंने अपने थैले से दुर्गा मां का चित्र और हनुमान चालीसा निकाला। मैंने इनको अपने साथ लाये लाल कपड़े में लपेटा, छोटी सी पूजा अर्चना की और इनको बर्फ में दबा दिया। आनंद के इस क्षण में मुझे अपने माता पिता का ध्यान आया।

जैसे मैं उठी, मैंने अपने हाथ जोड़े और मैं अपने रज्जु-नेता अंग दोरजी के प्रति आदर भाव से झुकी। अंग दोरजी जिन्होंने मुझे प्रोत्साहित किया और मुझे लक्ष्य तक पहुंचाया मैंने उन्हें बिना ऑक्सीजन के एवरेस्ट की दूसरी चढ़ाई चढ़ने पर बधाई भी दी। उन्होंने मुझे गले से लगाया और मेरे कानों में फुसफुसाया-''दीदी, तुमने अच्छी चढ़ाई की, मैं बहुत प्रसन्न हूं।''

कुछ देर बाद सोनम पुलजर पहुंचे और उन्होंने फोटो लेने शुरू कर दिये।

इस समय तक ल्हाटू ने हमारे नेता को ''एवरेस्ट पर हम चारों'' के होने की सूचना दे दी थी। तब मेरे हाथ में वॉकी-टॉकी दिया गया। कर्नल खुल्लर हमारी सफलता से बहुत प्रसन्न थे। मुझे बधाई देते हुए उन्होंने कहा, ''मैं तुम्हारी इस अनूठी उपलब्धि के लिए तुम्हारे माता-पिता को भी बधाई देना चाहूँगा।'' वे बोले कि देश को तुम पर गर्व है और

अब तुम ऐसे संसार में वापिस जाओगी जो तुम्हारे अपने पीछे छोड़े हुए संसार से एक दम भिन्न होगा।

हम सब आरोही एक दूसरे के गले मिले और आपस में एक दूसरे की पीठ थपथपाई। नेपाल का एन.ए.एफ. ''सात बहनों का'', टिस्को का, तथा मेरे कारण भारत का ध्वज, लहराया गया और फोटो लिए गये।

हमने शिखर पर 43 मिनट व्यतीत किये। ल्होत्से, नुपत्से और नकालू जैसी विशाल पर्वत श्रेणियां अब इस हमारे पर्वत के सामने बौने लग रहे थे। मैंने चोटी के समीप एक छोटे से खुले स्थान से पत्थरों के कुछ नमूने एकत्र किये।

हमने अपनी वापसी यात्रा 1.55 (एक बजकर 55 मिनट पर) आरम्भ की। मैं जानती



दक्षिण पूर्वी चोटी पर अंग दोरजी और ल्हाटू के साथ

थी कि मुझे अपनी वापसी यात्रा में विशेष रूप से सावधान रहना पड़ेगा क्योंकि चढ़ाई की अपेक्षा उतराई पर अधिक दुर्घटनाएं होती हैं। लेकिन मैं एक मूलभूत खतरे से अनजान थी। मैंने बर्फ रहित काले पथरीले स्थान पर अपना बर्फ से बचाव वाला चश्मा उतार लिया था। मैंने सोचा था कि बर्फ-अन्धता केवल, सूर्य किरणों के बर्फ पर पड़ते प्रतिबिम्ब की चकाचौंध से होती है। इसके अतिरिक्त वातावरण भी धुंधला था। वास्तव में बर्फ-अंधता अधिक ऊंचाइयों पर आती तेज परा-गैंगनी किरणों के कारण होती हैं और बर्फ अथवा इसकी चकाचौंध से इसका कोई संबंध नहीं है।

मुझे अपनी अज्ञानता की भारी कीमत चुकानी पड़ी। मेरी दोनों आंखों पर इसका दुष्प्रभाव पड़ा और मैं अत्यधिक दर्द से पीड़ित रही। कैम्प पर लौटते ही मुझे नींद की एक गोली लेनी पड़ी। मेरे एवरेस्ट प्रवास के दौरान यह मेरे पास अकेली गोली थी।

यद्यपि अंग दोरजी तेज़ चल रहे थे, मुझे लगा कि मैं अपनी उतराई में एक निश्चित गति से विश्वस्त कदमों से उतर रही थी—यहां तक कि अनुभवी शेरपा की गति से आ रही थी। जब हम साउथ कोल से कुछ ही दूरी पर थे, आश्चर्यपूर्वक मैंने मगन बिस्सा को ऊपर आते देखा। सायंकाल के समय खुली दक्षिण पूर्वी पहाड़ी पर चढ़ना खतरनाक था जबकि ऊंचाई और वातावरण के सामान्य खतरों के अतिरिक्त तापमान भी तेजी से गिरता जा रहा था। बिस्सा का थैला ऑक्सीजन सिलिंडरों और थर्मस फ्लास्कों से भरा था। उसने हमें बधाई दी और पीने के लिए कुछ गर्म पेय और जूस दिया।

वह ल्हाटू और पुलज़र की मदद के लिए भी गया और उन्हें भी गर्म पेय दिया। पुलज़र के पास कोई ऑक्सीजन मुखौटा नहीं था अतः बिस्सा ने उसे अपना मुखौटा दे दिया। ल्हाटू साउथ कोल पर सायं 6.00 बजे तक पहुंचा जबकि बिस्सा पुलज़र को अपनी रस्सी से सायं 7.00 बजे तक सुरक्षात्मक स्थिति में ले आया।

अंग दोरजी और मैं साउथ कोल पर सायं 5.00 बजे तक पहुंच गये। सभी ने हमें साउथ कोल से शिखर तक और वापिस साउथ कोल की यात्रा चोटी के हाल्ट सहित 10 घंटे 40 मिनट के समय में पूरी करने पर बधाई दी।

जैसे मैं अपने तम्बू में घुस रही थी, मैंने मेजर की कुमार को कर्नल खुल्लर से वायर लैस पर बात करते सुना। ''आप विश्वास करें या न करें, श्रीमान, ''वे उत्तेजना में बोल रहे थे,'' बचेन्द्री केवल तीन घंटे में ही वापिस आ गई है। और वह उतनी ही चुस्त दिख रही है जितनी वह आज सुबह चढ़ाई शुरू करने से पहले थी।''



चढ़ाई के बाद : साउथ कोल वापस आते हुए

यश की यंत्रणा

एवरेस्ट से लौटने के बाद के महीने मेरे लिए घबराहट के थे। लेकिन दिल्ली में पहला हफ्ता पूर्णतया कष्टदायक था। मेरी 18 घंटे की अथवा पूरे दिन भर की कार्य सूची भरी पूरी था। मेरी अति विशिष्ट व्यक्तियों से भेंट कराई गई; प्रेस–कान्फ्रेस, भाषण, अभिवादन और साक्षात्कार हुए।

मुझे पर्वतारोहण में श्रेष्ठता के लिए, भारतीय पर्वतारोहण संघ (आई०एम०एफ०) का प्रतिष्ठित स्वर्ण पदक तथा अन्य अनेक सम्मान और पुरस्कार प्रदान किए गए जो मैं याद भी नहीं रख सकती। पद्मश्री और प्रतिष्ठित अर्जुन पुरस्कार की घोषणा की गई। इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि वे सब समारोह और झंझट अहं तुष्टि प्रदान करते थे, लेकिन शरीर और धैर्य के लिए बहुत अधिक कष्टसाध्य थे। मैं बाधा रहित 24 घंटे की नींद के लिए कुछ भी देने को तैयार थी।

मैं यह नही कहती कि सबके आकर्षण और सम्मान का केन्द्र होना मुझे अच्छा नहीं लगा परन्तु मेरी सर्वाधिक हार्दिक इच्छा अपने माता-पिता बहनों और भाइयों के साथ होने तथा मेरे अपने गांव नकुरी के मित्रों से मिलने की थी।

मैं उस उमस भरे जून के दिन दिल्ली से चल पड़ी और आठ घंटे की यात्रा के बाद ऋषिकेश पहुंची। जैसे ही कार पहाड़ी की सड़क पर चढ़ने लगी, वर्षा शुरू हो गई, लेकिन भारी वर्षा के बावजूद, सड़क पर बसे गांवों से आये आदमी, औरतें और बच्चे अपनी उस बेटी का स्वागत करने के लिए इकट्ठे हो रहे थे– जिसने उनके अनुसार, गढ़वाल और भारत को गौरव प्रदान किया था। उन्होंने जल्दी जल्दी में स्वागत द्वार भी

बनाये थे। मैं अपने निश्चित समय से बहुत पीछे चल रही थी, क्योंकि मुझे उनकी बधाई स्वीकार करने के लिए रुकना पड़ता था। और जब तक मैं ज़िले की सीमा तक पहुंची, वहां पर विशाल जनसमूह काफी समय से मेरा अभिवादन करने के लिए इन्तजार कर रहा था। रात के 9.00 बजे गाड़ी मेरे गांव पहुंची। वर्षा के बावजूद, जैसे पूरा गांव मेरे स्वागत के लिए उमड़ पड़ा था। ढोल बाजे बजाते, शंख नाद करते, मंत्रोच्चारण करते, बतियाते और हल्ला करते हुए उन्होंने मुझ पर स्नेह वर्षा की और हर व्यक्ति मुझे माला पहनाना चाहता था।

जैसे जैसे में हंसती गाती भीड़ को चीरती हुई आगे बढ़ रही थी, मेरी आंखे दो चेहरों को ढूंढ रही थी। अचानक मैंने उन्हें देखा। मेरे माता-पिता एक झोंपडी के बाहर शान्त खड़े थे। वे बहुत अधिक रोमांचित दिखाई दे रहे थे।

मैं दौड़कर अपनी मां के पास गई और उसकी बाँहों में गिर पड़ीं। मां बेटी एक दूसरे की बाँहों में थीं और खुशी में रो रही थी। मैंने अपनी मां के कंधे के ऊपर से देखा और मुझे आनन्द में रोते हुए अपने पिता की भी धुंधली छाया नजर आई। वे मुझे अविश्वसनीय से देख रहे थे।

सपने साकार हुए

1 1 जुलाई को मैंने टिस्को के अध्यक्ष श्री मोदी को, टिस्को का वह ध्वज प्रदान किया जो मैंने एवरेस्ट की चोटी पर फहराया था। मि० मोदी ने मेरी पदोन्नति मैनेजर, एडवेंचर प्रोग्राम के पद पर घोषित की और कहा कि मुझे "टाटा यूथ एडवेंचर सेंटर" की प्रमुख बनकर जमशेदपुर में सभी– साहसिक गतिविधियों की एक मात्र इन्चार्ज बनना है। वास्तव में साहस और खेलकूद के काम में मि० मोदी के प्रोत्साहन और मदद से ही मेरे जैसे अनेक व्यक्तियों के लिए अपनी अपनी रुचि के क्षेत्र में कार्य करना और उसमें श्रेष्ठता हासिल करना संभव हो सका।

यह कम लोगों के भाग्य में ही होता है कि उनके स्वप्न सच हो जायें। मुझे न केवल मैं जो चाहती थी वह सब कुछ मिला वरन् मेरी अभीष्ट इच्छा से कहीं अधिक मिला। पर्वतारोहण तो मेरे रक्त में था। एवरेस्ट से तीन वर्ष पूर्व, मैंने अपने परिचित आरोहियों से अधिक आरोहण कर लिया था। इसके बाद 1984 में इस महान चोटी एवरेस्ट पर मेरा प्रथम आरोहण अभियान। 1986 में मैंने यूरोप के सर्वोच्च पर्वत मोन्ट ब्लाक की चढ़ाई की तथा चार अल्पाइन देशों में भी आधुनिकतम तकनीकों और विचारों के विशेषज्ञों के साथ चढ़ाई की।

लेकिन मुझे बच्चों के साथ रहना पसन्द है। अब मुझे युवाओं को साहस के काम शिविर लगाना, चढ़ाई करना, शैल आरोहण, नदी पार करना, उन्मुक्त प्रकृति से उन्हें अवगत कराना आदि सिखाने के लिए अच्छा वेतन मिलता है। मैं अपने कार्यक्रम में लड़कियों की तरफ विशेष ध्यान देती हूं क्योंकि मैं महसूस करती हूं कि भारत में हम उनकी उपेक्षा करते हैं और उन्हें बाहरी कामों के लिए निरुत्साहित करते हैं। जोखिम से

प्यार करना और खतरों मे खेलना जीवन में लड़कियों के लिए भी उतना ही जरूरी है जितना लड़कों के लिए, क्योंकि इससे उनमें साहस, निर्भीकता, और पहल शक्ति आती है।

मैं अनेक महत्वपूर्ण व्यक्तियों से मिली हूं। इनमें जिन दो व्यक्तियों ने मुझे सर्वाधिक प्रेरणा दी है वे हैं इंदिरा गांधी और शेरपा तेनजिंग नोर्गे। एवरेस्ट चढ़ाई के बाद जब मैं श्रीमती गांधी से मिली, उन्होंने कहा, ''हमें देश में सैकड़ों बचेन्द्रियों की आवश्यकता



आस्ट्रीया में चट्टान पर चढ़ाई

है।'' और उन्होंने मुझसे ग्रामीण लड़कियों तक पहुंचने के लिए कहा।

मैं तेनजिंग से पिछली बार दिसम्बर 1985 में मिली थी। उन्होंने मुझे बताया कि बचेन्द्री का संबंध अपने आप से नहीं है। अब मेरी रुचि, मेरे समय और मेरी मुस्कराहटों पर हर व्यक्ति का अधिकार है। उनका कहना था कि एवरेस्ट पर चढ़ने और प्रसिद्धि प्राप्त करने के अपने प्रतिफल हैं लेकिन इसकी कुछ जिम्मेदारियां भी हैं।

एवरेस्ट चढ़ाई से मेरी हार्दिक इच्छाओं की पूर्ति हुई है और मुझे सभी कुछ मिला है जो मेरे पास है मैं इससे अधिक कुछ नहीं चाहती।

श्रीमती इंदिरा गांधी के साथ



Printed at Print Process, New Delhi

₹ 18.00 ISBN 978-81-237-0929-1

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

